माननीय एम .एस लिब्रहान, अमरजीत चौधरी और एच. एस. बेदी, जे.जे, *के समक्ष*

जय सिंह और अन्य,-याचिकाकर्ता।

बनाम

हरियाणा राज्य,-प्रतिवादी।

सी.डब्ल्यू.पी. 1992 का क्रमांक 5877,

18 जनवरी, 1995

भारत का संविधान, 1950—पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स (रेगुलेशन) एक्ट, 1961—पंजाब विलेज कॉमन्स लैंड (रेगुलेशन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992 द्वारा संशोधित धारा 2(जी)—(हरियाणा अधिनियम नंबर 9, 1992)— भारतीय संविधान के अधिकारातीत

माना गया कि पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992 की धारा 2, 1992 का हरियाणा अधिनियम संख्या 9 जो पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स (रेगुलेशन) एक्ट, 1961 की धारा 2 (जी) में निहित परिभाषा में जो बदलाव किया गया है, वह भारत के संविधान के अधिकारेतर है।

(पैरा 87)

भारत का संविधान, 1950-पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) अधिनियम, 1961-धारा 7 (पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992 (हरियाणा अधिनियम संख्या 9, 1992) द्वारा प्रतिस्थापित)- भारत का संविधान अंतःविषय है।

यह माना गया कि 1992 के हरियाणा अधिनियम संख्या 9 की धारा 3, - जिसके तहत मूल अधिनियम की धारा 7 को प्रतिस्थापित किया गया है और प्रतिस्थापित प्रावधान अर्थात. धारा 7 की उपधारा (1) भारत के संविधान के अंतर्गत आती है।

भारत का संविधान, 1950-पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) अधिनियम, 1961-धारा 7(2) (पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992 (हरियाणा अधिनियम संख्या 9, 1992) द्वारा प्रतिस्थापित)- भारत का संविधान अंतर्विरोधित है।

(पैरा 87)

यह माना गया कि 1992 के हरियाणा अधिनियम संख्या 9 की धारा 3, जिसके तहत मूल अधिनियम की धारा 7 को प्रतिस्थापित किया गया है और प्रतिस्थापित प्रावधान अर्थात धारा 7 की उपधारा (2) भारत के संविधान के अंतर्गत हैं।

(पैरा 87)

भारत का संविधान, 1950-पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) अधिनियम, 1961-धारा 13. बी-पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992-हरियाणा अधिनियम संख्या 9, 1992 की प्रतिस्थापित उपधारा 1 का प्रावधान -अधिकारातीत।

माना गया कि 1992 के हरियाणा अधिनियम 9 की धारा 5, जिसने मूल अधिनियम की धारा 13-बी में संशोधन किया है और प्रतिस्थापित उप-धारा (1) का प्रावधान भारत के संविधान के दायरे से बाहर है।

(पैरा 87)

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 12—पंचायत—चाहे कोई राज्य हो। माना जाता है कि 'राज्य' को भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 द्वारा परिभाषित अच्छी तरह से समझा जाता है। यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि मुआवजे के भुगतान के बिना किसी भी व्यक्ति को अधिकतम सीमा के भीतर उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि 1948 के चकबंदी अधिनियम के तहत सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित सभी भूमि, जिसे चकबंदी नियमों के तहत शामलात देह के रूप में वर्णित किया गया है, को 1992 के संशोधन अधिनियम द्वारा 1961 के अधिनियम के तहत शामलात देह की परिभाषा के दायरे में लाया गया था। शामलात देह की एक सार्थक परिभाषा प्रदान करके। मेरा सुविचारित विचार है कि 1992 के अधिनियम द्वारा अधिनियम में किए गए संशोधन के आवश्यक परिणाम के रूप में, चकबंदी अधिनियम, 1948 के तहत आरक्षित भूमि पंचायतों की संपत्ति बन गई, बल्कि 1961 के अधिनियम के तहत इसका स्वामित्व ग्राम पंचायतों में निहित हो गया। यह वह ग्राम पंचायत है जो संपदा की स्वामित्व धारक बन गई। संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में पंचायत राज्य है।

(पैरा 39)

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 31-ए, 31-बी-क्या राज्य किसी व्यक्ति की भूमि का अधिग्रहण कर सकता है जो उसकी अधिकतम सीमा के भीतर है-सकारात्मक माना जाता है लेकिन केवल इसके पूर्ण बाजार मूल्य के भुगतान पर।

माना गया कि संविधान के अनुच्छेद 31-ए के उल्लंघन में बनाया गया कानून कानून द्वारा संरक्षित नहीं है, सिवाय इसके कि जब इसे संविधान के अनुच्छेद 31-बी के तहत 9वीं अनुसूची में रखकर संरक्षित किया गया हो। इस प्रकार, संवैधानिक रूप से राज्य किसी व्यक्ति की भूमि को उसके पूर्ण बाजार मूल्य के भुगतान पर एक अधिकतम सीमा के भीतर ही अधिग्रहित कर सकता है। यह न केवल निषेध है बल्कि नागरिकों को अधिकतम सीमा के भीतर भूमि रखने का अधिकार भी प्रदान करता है। इसके अलावा अधिग्रहीत भूमि के लिए मुआवजे का अधिकार सुनिश्चित किया गया है।

(पैरा 42)

इसके अलावा, यह माना जाता है कि हमारे सामने चुनौती के विषय के प्रावधानों के सही उपदेशों में, केवल एक और एक ही निष्कर्ष निकलता है, कि चकबंदी कार्यवाही के दौरान सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि, मालिकों की भूमि से उनके लिए आनुपातिक कटौती लागू करके चकबंदी नियमों के तहत भूमि, अधिकतम सीमा के भीतर। चकबंदी नियमों/अधिनियम के तहत वर्णित या नामित भूमि, जिसका प्रबंधन पंचायत में निहित है और स्वामित्व मालिकों के पास जारी है और अब ग्राम पंचायतों में निहित है। यह ग्राम पंचायत ही है जो अपनी सभी उपाधियों की स्वामी बन गई, चाहे उनका स्वरूप कुछ भी हो। मालिकों ने इसके उपयोगकर्ताओं को इसके सभी हितों से वंचित कर दिया। यदि मैं ऐसा कह सकता हूं, तो राज्य का यह कृत्य बिना कोई मुआवजा दिए संपत्ति का अधिग्रहण करना और उसके बाद इसे किसी अन्य प्राधिकरण यानी ग्राम पंचायत को आवंटित करना, संविधान के अनुच्छेद 31-ए का पूर्ण उल्लंघन है। प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 31-ए के अनुरूप नहीं होने के दोष से ग्रस्त हैं। यह वह कार्य करना एक दिखावटी और छिपा हुआ उद्देश्य है जिस पर संविधान विशेष रूप से प्रतिबंध लगाता है।

(पैरा 45)

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 226/227—पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम 1992—एस. 2(जी) (4)—2 (जी) 6—भारत के संविधान का उल्लंघन, अनुच्छेद 31-बी भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 12—पंचायत—चाहे कोई राज्य हो।

माना जाता है कि 'राज्य' को भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 द्वारा परिभाषित अच्छी तरह से समझा जाता है। यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि मुआवजे के भुगतान के बिना किसी भी व्यक्ति को अधिकतम सीमा के भीतर उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि 1948 के चकबंदी अधिनियम के तहत सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित सभी भूमि, जिसे चकबंदी नियमों के तहत शामलात देह के रूप में वर्णित किया गया है, को 1992 के संशोधन अधिनियम द्वारा 1961 के अधिनियम के तहत शामलात देह की परिभाषा के दायरे में लाया गया था। शामलात देह की एक सार्थक परिभाषा प्रदान करके। मेरा सुविचारित विचार है कि 1992 के अधिनियम द्वारा अधिनियम में किए गए

संशोधन के आवश्यक परिणाम के रूप में, चकबंदी अधिनियम, 1948 के तहत आरक्षित भूमि पंचायतों की संपत्ति बन गई, बल्कि 1961 के अधिनियम के तहत इसका स्वामित्व ग्राम पंचायतों में निहित हो गया।

यह ग्राम पंचायत ही है जो संपदा की स्वामित्व धारक बन गई। संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में पंचायत राज्य है।

(पैरा 39)

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 31-ए, 31-बी-क्या राज्य किसी व्यक्ति की भूमि का अधिग्रहण कर सकता है जो उसकी अधिकतम सीमा के भीतर है-सकारात्मक माना जाता है लेकिन केवल इसके पूर्ण बाजार मूल्य के भुगतान पर।

माना गया कि संविधान के अनुच्छेद 31-ए के उल्लंघन में बनाया गया कानून कानून द्वारा संरक्षित नहीं है, सिवाय इसके कि जब इसे संविधान के अनुच्छेद 31-बी के तहत 9वीं अनुसूची में रखकर संरक्षित किया गया हो। इस प्रकार, संवैधानिक रूप से राज्य किसी व्यक्ति की भूमि को उसके पूर्ण बाजार मूल्य के भुगतान पर एक अधिकतम सीमा के भीतर ही अधिग्रहित कर सकता है। यह न केवल निषेध है बल्कि नागरिकों को अधिकतम सीमा के भीतर भूमि रखने का अधिकार भी प्रदान करता है। इसके अलावा अधिग्रहीत भूमि के लिए मुआवजे का अधिकार सुनिश्चित किया गया है।

(पैरा 42)

इसके अलावा, यह माना गया कि हमारे सामने चुनौती के विषय के प्रावधानों के सही उपदेशों में, केवल एक और एक ही निष्कर्ष निकलता है, कि चकबंदी कार्यवाही के दौरान सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि, मालिकों की भूमि से बाहर, चकबंदी नियमों के तहत उनकी भूमि पर अधिकतम सीमा के भीतर आनुपातिक कटौती लागू करके। चकबंदी नियमों/अधिनियम के तहत वर्णित या नामित भूमि, जिसका प्रबंधन पंचायत में निहित है और स्वामित्व मालिकों के पास जारी है और अब ग्राम पंचायतों में निहित है। यह ग्राम पंचायत ही है जो अपनी सभी उपाधियों की स्वामी बन गई, चाहे उनका स्वरूप कुछ भी हो। मालिकों ने इसके उपयोगकर्ताओं को इसके सभी हितों से वंचित कर दिया। यदि मैं ऐसा कह सकता हूं, तो राज्य का यह कृत्य बिना कोई मुआवजा दिए संपत्ति का अधिग्रहण करना और उसके बाद इसे किसी अन्य प्राधिकरण यानी ग्राम पंचायत को आवंटित करना, संविधान के अनुच्छेद 31-ए का पूर्ण उल्लंघन है। प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 31-ए के अनुरूप नहीं होने के दोष से ग्रस्त हैं। यह वह कार्य करना एक दिखावटी और छिपा हुआ उद्देश्य है जिस पर संविधान विशेष रूप से प्रतिबंध लगाता है।

(पैरा 45)

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 226/227—पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम 1992—एस. 2(जी)(4)—2 (जी) 6—भारत के संविधान का उल्लंघन, अनुच्छेद 31-बी

यह माना गया कि चूँकि धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) की परिभाषाएँ इतनी आपस में जुड़ी हुई हैं कि किसी भी भाग को अलग नहीं किया जा सकता है और अधिकारातीत नहीं माना जा सकता है और इन धाराओं ने मुआवजे के बिना भूमि अधिग्रहण के लिए राज्य की शक्तियों का स्पष्ट रूप से उल्लंघन किया है, ये प्रावधान संवैधानिकता की कसौटी पर खरे नहीं उतर सकते। यह बात महत्वहीन है कि अपराध खुला, प्रत्यक्ष या प्रकट, छिपा हुआ गुप्त और अप्रत्यक्ष है। यह रंग-बिरंगे कानून का एक टुकड़ा है। का उल्लंघन । अनुच्छेद 31-ए इतना स्पष्ट है कि इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता। मेरा मानना है कि धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) भारत के संविधान के अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन करते हुए अमान्य हैं। इसलिए, हरियाणा राज्य को 1992 के अधिनियम की धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) के प्रावधानों को लागू करने से रोकने के लिए परमादेश रिट जारी की गई।

(पैरा 57)

भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद 226/227—पंजाब ग्राम सामान्य भूमि विनियमन अधिनियम 1961—एस. 7—निष्कासन—क्या सारांश प्रक्रिया प्रकृति में मनमाना है—मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य दोनों को ध्यान में रखते हुए न्यायिक रूप से कार्य करने के लिए अधिकारियों पर निर्भर है—शीर्षक सी.पी.सी. के अनुसार तय किया जाना है।

माना गया कि चुनौती के तहत प्रावधानों द्वारा मौखिक साक्ष्य को खारिज नहीं किया गया है यह अंतर्निहित है क्योंकि प्राधिकरण के इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि शीर्षक का प्रश्न प्रथम दृष्टया शामिल है, शीर्षक का प्रश्न सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुसार तय किया जाना है।

(पैरा 71)

इसके अलावा, यह माना गया कि लाभार्थियों के लिए शीघ्र उपचार प्रदान करने वाले सारांश निष्कासन के प्रावधानों को स्थिति की आवश्यकता से परे कठोर या मनमाना नहीं कहा जा सकता है। प्रभावित होने की संभावना वाले पक्ष को सुनवाई का अवसर प्रदान करना, जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अभिन्न अंग है और जिसे कानूनी अधिकार में शामिल किया गया है, धारा 7 के तहत प्रदान किया गया है। केवल निर्णय लेने का मंच सिविल कोर्ट से बदलकर राजस्व प्राधिकरण कर दिया गया है। अधिनियम द्वारा प्रदत्त मापदंडों एवं प्रतिबंधों के अंतर्गत राजस्व प्राधिकारी से न्यायिक निर्णय प्राप्त करने के अधिकार के साथ छेड़छाड़ नहीं की गई है।

(पैरा 75)

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद226/227-हरियाणा द्वारा संशोधित पंजाब ग्राम सामान्य भूमि विनियमन अधिनियम, 1961-धारा 5 प्रावधान-अपील की सुनवाई से पहले हर्जाना जमा करने की शर्त लगाना अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है-मनमाना और अनुचित होना।

माना गया कि अपील पर विचार करने से पहले हर्जाना जमा करने के प्रावधान द्वारा प्रदान की गई शर्त लगाना अनुचित है। यह प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के मनमाना और अनुचित होने से प्रभावित है। इसके अलावा अधिकारियों को भू-राजस्व के बकाया के रूप में लगाए गए नुकसान की वसूली करने का अधिकार है। उपरोक्त सभी तथ्यों और टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए, मेरा मानना है कि 1992 के अधिनियम की धारा 5 में अपील पर विचार करने के लिए दंडात्मक हर्जाना जमा करने का प्रावधान संविधान के अधिकार क्षेत्र से बाहर है और इसे ऐसा घोषित किया जाता है। .

(पैरा 81)

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 226/227—पंजाब ग्राम सामान्य भूमि विनियमन अधिनियम, 1961—धारा 7 (2) और 7 (5)—क्या यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 का उल्लंघन है

माना गया कि धारा 7-ए और बी के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 7 (2) और 7 (5) को पढ़ने से यह पता चलता है कि विधायिका ने गांव की सामान्य भूमि के अनधिकृत या अवैध कब्जेदार के लिए नागरिक और साथ ही आपराधिक दायित्व प्रदान किया है। धारा 7(2) की उस संदर्भ में दंडात्मक क्षति प्रदान करने की व्याख्या करते समय, जिसमें यह धारा में होती है, यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि गांव की सामान्य भूमि पर गलत या अनधिकृत कब्जे के लिए मुआवजे के माध्यम से दंडात्मक क्षति प्रदान की गई है।

(पैरा 84)

इसके अलावा, यह माना गया कि उपधारा (5) स्पष्ट रूप से अपने योजना पढ़ने पर कारावास के साथ दंडनीय अपराध के रूप में गलत या अनधिकृत कब्जे का प्रावधान करती है। उपयोग और कब्जे के लिए हर्जाना प्रदान करने को अपराध बनाने वाले प्रावधान के रूप में नहीं बढ़ाया जा सकता है जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 और न्यायालय के न्यायिक न्यायालयों में समझा जाता है। एक ही अपराध के लिए दो बार कोई अभियोजन या सज़ा नहीं है। उपधारा (2) अनधिकृत कब्जे वाले के लिए नागरिक दायित्व का प्रावधान करती है जबकि उपधारा (5) अनधिकृत कब्जे के लिए सजा का प्रावधान करती है।

(पैरा 86)

एच.एस.हुड्डा, वरिष्ठ अधिवक्ता, महावीर संधू, अधिवक्ता ,याचिकाकर्ता की ओर से ।

एच. एल. सिब्बल, महाधिवक्ता हरियाणा और जे. वी. यादव, उप महाधिवक्ता, हरियाणा, प्रतिवादी की ओर से ।

निर्णय

एम. एस. लिब्रहान, जे.

(1) याचिकाकर्ता ने पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स (रेगुलेशन') हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1991 (1992 का अधिनियम संख्या 9) की धारा 2, 3 और 5 (1) के प्रावधानों को चुनौती दी, जिसे इसके बाद 1992 का अधिनियम कहा जाएगा। भारत के संविधान के अधिकारातीत है ।

(2) संक्षेप में, रिट याचिकाओं में याचिकाकर्ताओं के विभिन्न वकीलों द्वारा दी गई चुनौती के आधार इस प्रकार हैं: -

(i) 1992 के अधिनियम के लिए भारत के राष्ट्रपति की कोई सहमति नहीं है;

(ii) पूर्वी पुनियाब चकबंदी या जोत अधिनियम, 1948 (बाद में इसे 'चकबंदी अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के तहत भूमि को सामान्य प्रयोजनों के लिए आरक्षित किया गया था, जिसमें अधिकतम सीमा के भीतर मालिकों की भूमि से उनकी जोत में आनुपातिक कटौती की गई थी और प्रबंधन किया गया था। ऐसी भूमि चकबंदी अधिनियम के तहत ग्राम पंचवट या राज्य में निहित है। अब 1992 के अधिनियम के आधार पर, स्वामित्व, हित, ग्राम पंचायत में निहित है। यह याचिकाकर्ताओं को उनके मालिकाना अधिकार यानी स्वामित्व और ब्याज से वंचित कर देता है, बिना 1992 के अधिनियम के तहत किसी भी मुआवजे का भुगतान या प्रावधान किया गया है। अधिकतम सीमा तक भूमि रखने को भ्रामक बना दिया गया है। इस प्रकार, 1992 का अधिनियम भारत के संविधान के अनुच्छेद 31-ए के दायरे से बाहर है।

(iii) 1992 के अधिनियम के प्रावधान अन्यायपूर्ण अनुचित, मनमाने ढंग से, सनकी और भेदभावपूर्ण हैं क्योंकि समान भूमि यानी सामान्य उद्देश्यों के लिए उपयोग नहीं की जाने वाली भूमि जिसका विभाजन किया गया था, उसे शामलात देह की परिभाषा के दायरे से बाहर रखा गया था। परिणामस्वरूप, 1992 का अधिनियम भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 16 और 19 के जनादेश का उल्लंघन करता है।

(iv) 1992 के अधिनियम द्वारा पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स एक्ट 1961 की धारा 2 (जी) (6) के साथ जोड़ा गया स्पष्टीकरण, 1961 के अधिनियम की धारा 4 के साथ पढ़ा गया, अधिनियम के मूल प्रावधानों को खत्म नहीं कर सकता है।

(v) 1961 के अधिनियम की धारा 13 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए; 1992 के अधिनियम द्वारा 1961 के अधिनियम की धारा 13-ए को हटाने से न्यायिक समीक्षा का संकेत मिलता है।

(vi) प्रभावित व्यक्तियों को सामान्य कानून उपचार का कोई वैकल्पिक उपचार प्रदान नहीं किया जाता है। 1992 के अधिनियम की धारा 7 के तहत बेदखली की कार्यवाही शुरू होने तक स्वामित्व को मंजूरी मिलने पर प्रतिबंध लगाया गया है।

(vii) 1992 के अधिनियम की धारा 7 अधिकारियों को स्वामित्व के प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए अधिकृत नहीं करती है।

(vii) अपील के मनोरंजन के लिए जुर्माने की राशि जमा करने की शर्त लगाकर अपील के अधिकार को भ्रामक, निरर्थक, अप्रभावी और तर्कहीन बना दिया गया है। भू-राजस्व के बकाया के रूप में जुर्माने की वसूली और अपील पर विचार करने से पहले जुर्माना जमा करना दो अलग-अलग अवधारणाएँ हैं;

(ix) जिस तारीख से इसकी गणना की जानी है, उसके बारे में दिशा-निर्देश दिए बिना पूर्वव्यापी रूप से जुर्माना लगाने के प्रावधान और प्रभावित व्यक्तियों को सुने बिना जुर्माना लगाना मनमाना है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 20 का उल्लंघन है।

(x) भूमि पर अनधिकृत कब्जे के लिए उस अवधि के लिए कारावास जब यह कोई अपराध नहीं था और साथ ही अनधिकृत कब्जे के लिए दंड के रूप में नुकसान की वसूली पूर्वव्यापी सजा के अलावा, दोहरे खतरे के समान होगी। इस प्रकार जुर्माने

के रूप में कारावास और क्षति की वसूली का प्रावधान करने वाले प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 का उल्लंघन हैं।

याचिकाकर्ताओं की दलीलों को खारिज कर दिया गया। राज्य की ओर से तर्क दिया गया कि अधिनियम पर राष्ट्रपति की सहमति है। आगे यह तर्क दिया गया कि चकबंदी के दौरान आरक्षित भूमि का प्रबंधन चकबंदी अधिनियम की धारा 18 और 23-ए के तहत राज्य या ग्राम पंचायतों में निहित है, हालांकि स्वामित्व मालिकों में निहित रहा। किसी भी मालिक को कस्टम के तहत भूमि का उपयोग करने का अधिकार नहीं था। यह वास्तव में सामान्य भूमि थी जैसा कि 1992 के अधिनियम के लागू होने से पहले ही 1961 के अधिनियम द्वारा परिकल्पित किया गया था। इस प्रकार, विवादित प्रावधान याचिकाकर्ताओं के अधिकारों के अधिग्रहण का प्रावधान नहीं करते हैं। ग्राम पंचायतों या राज्य में पहले से ही निहित प्रबंधन और नियंत्रण का अधिकार केवल 1992 के अधिनियम द्वारा संशोधित किया गया है। मालिकों के पास केवल एक भ्रामक शीर्षक था, जो अभी भी उनके पास जारी है। स्वामित्व उन पंचायतों में निहित नहीं है जो अभी भी पूर्ण मालिक नहीं हैं। कोई व्यक्तिगत खेती नहीं थी, इसलिए, न तो मालिकों के अधिकार का कोई हनन है और न ही लागू अधिनियम के तहत कोई अधिग्रहण है। चकबंदी अधिनियम, 1961 के अधिनियम के तहत मालिक भूमि के लाभार्थी थे और वे अभी भी आक्षेपित अधिनियम के तहत ऐसे ही बने हुए हैं। पंचायत भूमि का उपयोग केवल ग्रामीणों के लाभ के लिए ही कर सकती है। अधिनियम का उद्देश्य गाँव की सामान्य भूमि पर अधिक प्रभावी प्रबंधन और नियंत्रण प्रदान करना है। चकबंदी अधिनियम के प्रावधानों को बरकरार रखा गया है जिसके तहत प्रबंधन का अधिकार पंचायतों में निहित है।

(3) अधिग्रहण का प्रश्न प्रत्येक मामले के उन तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा जिनकी पैरवी नहीं की गई है। आगे यह तर्क दिया गया कि इस तथ्य के अलावा कि 1992 का अधिनियम कृषि सुधारों से परे है और भारत के संविधान का उल्लंघन होने के आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती, संविधान के अनुच्छेद 31-ए, 31-बी, 31-सी का कोई उल्लंघन नहीं है। यह एक न्यायसंगत अधिनियम है.

(4) न्यायिक समीक्षा और जांच का अधिकार अभी भी अस्तित्व में है और विवादित अधिनियम द्वारा इसे भ्रामक नहीं बनाया गया है। अधिनियम के तहत अधिकारियों के आदेश संविधान के अनुच्छेद 226/32 के तहत न्यायिक समीक्षा के अधीन हैं। अधिनियम के तहत प्राधिकारियों के आदेशों की सिविल न्यायालयों द्वारा समीक्षा को रोकने मात्र से यह अधिनियम अधिकारातीत नहीं हो जाएगा। अधिनियम स्वयं अधिनियम के तहत अधिकारों को लागू करने के लिए एक वैकल्पिक उपाय प्रदान करता है और साथ ही पंचायत के अलावा किसी अन्य व्यक्ति में शीर्षक की रक्षा करने का अधिकार भी प्रदान करता है।

(5) यह प्रस्तुत किया गया था कि सर्टिओरारी आदि जैसे संवैधानिक उपाय याचिकाकर्ताओं के लिए उपलब्ध हैं, केवल सामान्य कानून नगरपालिका न्यायालयों के समक्ष उपचार को रोकने से न्यायिक जांच का उन्मूलन नहीं होगा, न ही 1992 के अधिनियम के बावजूद वैकल्पिक उपचार के प्रावधानों की आवश्यकता होगी। इसके लिए प्रावधान करता है.

(6) अपील का अधिकार एक वैधानिक अधिकार है और इसे केवल अधिकार बनाने वाले क़ानून के अनुसार ही लागू किया जा सकता है। अधिनियम की तात्कालिकता और उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अपील आदि का उत्तराधिकार प्रदान करना विधायिका का काम है।

(7) आगे यह तर्क दिया गया कि कोई भी कानून तथ्यों से परे लागू नहीं हो सकता। याचिकाकर्ताओं ने यह दलील नहीं दी है कि क्या चकबंदी अधिनियम के तहत जमीनें सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित थीं और क्या ये अधिकतम सीमा के भीतर उनके कब्जे में थीं। भूमि की प्रकृति के संबंध में प्रश्न, अर्थात क्या यह 'शामलात देह' की परिभाषा के चार भागों में आता है या नहीं, तथ्य का प्रश्न है और अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा उचित रूप से निर्णय लिया जा सकता है।

(8) अंतिम लेकिन महत्वपूर्ण बात, यह आग्रह किया गया था, याचिकाएं खामियों से ग्रस्त हैं क्योंकि चकबंदी अधिनियम के तहत योजना 1934 में अंतिम हो गई जब भूमि पंचायत में निहित हो गई। 1992 में भूमि को पंचायत में निहित करने को चुनौती नहीं दी जा सकती क्योंकि चकबंदी योजना को चुनौती दिए बिना कोई भी रिट याचिका सुनवाई योग्य नहीं है जिसमें भूमि सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित की गई थी।

(9) जुर्माना लगाना न तो दंडात्मक प्रकृति का है और न ही पूर्वव्यापी है। अपराध होना चाहिए, फिर अभियोजन और उसके बाद ही जुर्माना। अभियोजन किसी न्यायालय के समक्ष एक अवधारणा है। जो परिवर्तन लाए गए हैं वे स्वभावतः आवश्यक हैं और इन्हें आगे सज़ा या जुर्माने का रंग नहीं दिया जा सकता। प्रदान किया गया जुर्माना अनधिकृत और अवैध कब्जे के लिए प्रतिपूरक प्रकृति का है। इस प्रकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 का कोई उल्लंघन नहीं है।

(10) अंत में, यह आग्रह किया गया कि धारा 2 (जी) (6) का स्पष्टीकरण धारा के मूल प्रावधान को खत्म नहीं करता है; विभिन्न रिट याचिकाओं को पढ़ने और पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा संबोधित तर्कों पर विचार करने से उठाए गए प्रश्नों के निर्धारण के लिए आवश्यक तथ्यात्मक मैट्रिक्स निम्नानुसार उभरता है: -

(11) गांव के मालिकों की स्वामित्व वाली भूमि में कटौती लागू करके स्वामित्व की भूमि को चकबंदी के तहत आम उद्देश्यों के लिए आरक्षित किया गया था, यानी चकबंदी कार्यवाही के दौरान 1948 के चकबंदी अधिनियम के तहत भूमि स्वामित्व को सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित किया गया था। 'सामान्य प्रयोजन' को 1948 के चकबंदी अधिनियम द्वारा परिभाषित किया गया है। चकबंदी अधिनियम के तहत सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि का प्रबंधन, चकबंदी अधिनियम,1948 की धारा 18 और 23-ए के संदर्भ में या तो राज्य या ग्राम पंचायत में निहित है। इस प्रकार आरक्षित भूमि को पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (एकीकरण और विखंडन की रोकथाम) नियम 1949 (इसके बाद 'एकीकरण नियम' के रूप में संदर्भित) के नियम 16 के तहत निर्धारित किया गया था। यानी इसे अधिकारों के रिकॉर्ड के 'स्वामित्व' के कॉलम में जुमला मलकान-वाह-दिगर हकदारन-अराजी-हसाब-हिसार रकबा के रूप में वर्णित किया गया था। जोत समेकन अधिनियम के तहत, प्रबंधन गांव के मालिकाना निकाय की ओर से पंचायत द्वारा प्रदान या किया जाना था। 1992 की सिविल रिट याचिका संख्या 5877 में, विवादग्रस्त भूमि से संबंधित प्रविष्टियाँ इस प्रकार हैं: -

(12) 'स्वामित्व' के कॉलम में विवादित भूमि को शामलात देह हसब रसद अराजी खेवत के रूप में दिखाया गया था और 'कब्ज़ा' के कॉलम में इसे मकबूज़ा बाशिंद-गान देह के रूप में दिखाया गया था।

(13) याचिकाकर्ताओं का दावा है, यह कभी भी ग्राम पंचायत में निहित नहीं था। गांव की स्थापना के समय से ही मालिकों का कब्जा है। भूमि न तो सामान्य उद्देश्यों के लिए जोत समेकन अधिनियम के तहत आरक्षित थी और न ही राज्य या पंचायत के प्रबंधन के अधीन थी। याचिकाकर्ता गांव के मालिक के रूप में विवादग्रस्त भूमि के मालिक थे और हैं। 1992 के संशोधित अधिनियम की आड़ में वहां का स्वामित्व छीना या ख़त्म नहीं किया जा सकता है।

(14) इस स्तर पर मैं यह कहना जल्दबाजी कर सकता हूं कि इन सभी संबंधित बड़ी संख्या में मामलों में, अलग-अलग याचिकाओं में भूमि का अलग-अलग वर्णन किया गया है, आइटम का सामान्य विवरण निम्नानुसार है: -

(15) 'स्वामित्व' के कॉलम में इसका वर्णन या तो शामलात देह हसब रसद अराजी खेवट या शामलात पट्टी बजरिया हसब हिसार जदीद या शामलात देह हसब रसद ज़र खेवत या जुमलामलकान-वाह-दिगर-हकदारन-हसबरसद रकबा खेवत या जुमला मालकान-वाह दीगर हकदारन-अराजी-हसब-हिसार रकबा या शामलात देह हसब रसद अराजी खेवत या जुमला मलकान— वाह-दिगर हकदारन-हसबरसद-रकबा, जबकि 'कब्जा' के कॉलम में प्रविष्टि को या तो मकबुजा बशिंदगान देह या मकबुजा मलकान के कब्जे में या गैर मुरूसियन के रूप में दर्ज विशेष शेयरधारकों या व्यक्तियों के नाम पर या संयुक्त नामों में वर्णित किया गया था। शेयरधारकों की या शेयरधारकों द्वारा 'खुदकाश्त' या मोटे-किराए आदि के बारे में। ज्यादातर तर्क केवल ग्राम सामान्य भूमि अधिनियम 1992 (1992 का अधिनियम संख्या 1) के दायरे से संबंधित थे। मैं 1992 के अधिनियम संख्या 1 की शक्तियों के प्रश्न के संबंध में स्वयं को संबोधित करूंगा।

(16) क्रमिक ऐतिहासिक परिदृश्य का संक्षिप्त संदर्भ एक प्रारंभिक आवश्यकता है। आम तौर पर, साधारणतया और आम तौर पर यह स्वीकार किया जाता है कि संपत्ति रखना और कब्ज़ा करना मूल रूप से मानव स्वभाव में समाहित है। यह मनुष्यों की इच्छाओं और उनकी सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है। किसी व्यक्ति की प्राकृतिक इच्छाएं, सुरक्षा और पहचान के लिए उसकी भावनाएं उसके पास निहित संपत्ति के स्वामित्व या शीर्षक से संतुष्ट हो सकती हैं। सामान्यतः इस पर कोई गम्भीर आपत्ति नहीं हो सकती। समतामूलक एवं कृषि प्रधान समाज के व्यक्ति में ये लक्षण अधिक प्रबल हो सकते हैं।

(17) देश के इस हिस्से में किसी गाँव के बसने पर यह देखा जा सकता है कि ज़मीन का कुछ हिस्सा सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित किया गया था। इसका कारण ग्रामीण जीवन और कृषि अर्थव्यवस्था की आवश्यकताएं हो सकती हैं। समय के साथ गांव में तीन तरह की संपत्तियों का पता चला। सबसे पहले, वे संपत्तियाँ जो उसके मालिक के पास थीं और उनका आनंद लिया जाता था, निजी संपत्ति कहलाती थीं। दूसरे, मानव स्वभाव के अनुरूप, गांव के मालिकों की अनिवार्य सामाजिक और आर्थिक जरूरतों के अनुरूप, ग्रामीणों ने अपने सामान्य उपयोग के लिए यानी मालिकाना समुदाय द्वारा संयुक्त रूप से उपयोग के लिए भूमि आरक्षित की। इस प्रकार पुनः प्राप्त भूमि का उपयोग केवल स्वामियों के सामान्य प्रयोजनों के लिए किया जाता था। इन भूमियों को आम तौर पर पट्टी आदि के नाम से जाना जाता है। तीसरा, कुछ भूमि कृषि अर्थव्यवस्था और ग्रामीणों की अन्य मानवीय आवश्यकताओं के अधीन व्यक्तियों द्वारा उपयोग के लिए आरक्षित की गई थी। इस प्रकार आरक्षित भूमि का उपयोग ग्रामीणों द्वारा संयुक्त रूप से किया जाना था, भले ही इसमें या गाँव की जोत में उनके मालिकाना हित कुछ भी हों, उदाहरण के लिए चरागाहों, तालाबों, पोखरों और जलाशयों के लिए आरक्षित भूमि इस श्रेणी में आती है। ऐसी भूमियों को साधारण व्यक्ति द्वारा शामलात देह कहा जाने लगा। यह इस प्रकार की भूमि है जिसके बारे में हम चिंतित हैं और जिस पर निर्णय के बाद के भाग में विचार किया जाएगा, ऐसी भूमि पर व्यक्तियों, गैर-मालिकों आदि के अधिकार को प्रथागत कानूनों में परिभाषित किया गया था। मोहल्ले के रिवाजे आम वगैरह। रैटिगन प्रथागत कानून के पैराग्राफ 223 और 224 का संदर्भ लिया जा सकता है। 13 लाहौर 92 में यह देखा गया कि केवल मालिक ही नहीं बल्कि केवल मलकान क़ब्ज़ा ही हिस्सेदारी के हकदार थे यानी जिन व्यक्तियों के पास वह ज़मीन है जिस पर राजस्व का आकलन किया जाता है और जो खेवट में सह-हिस्सेदार थे, वे भुगतान किए गए भू-राजस्व के अनुपात में शामलात में हिस्सेदारी के हकदार थे। . यह खेवट होल्डिंग का उपांग या सहायक उपकरण नहीं था। एक विक्रेता शामलात देह का अपना हिस्सा बेच सकता है। गैर-मालिकों के पास सीमित अधिकार थे। मालिक संयुक्त मालिक थे और उन्हें सभी संयुक्त मालिकों की सहमति के बिना कुछ भी करने या उससे निपटने का कोई अधिकार नहीं था।

(18) सभ्यता के विकास, समाज की जागृति और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जरूरतों में वृद्धि के साथ यह प्रथागत रूप से स्वीकार कर लिया गया बल्कि यह स्थापित हो गया कि व्यक्तियों को गांव में उनकी जोत या खेवट आदि की परवाह किए बिना शामलात देह या भूमि में हिस्सेदारी का आनंद मिलता है। यह पराया था. स्वाभाविक परिणाम के रूप में, शामलात देह में हिस्सेदारी रखने वाले सभी व्यक्तियों को संयुक्त मालिक माना जाने लगा। मैं यह कहने में जल्दबाजी कर सकता हूं कि हालांकि परंपरागत रूप से गैर-मालिकों और गांव की अर्थव्यवस्था में सहायक खेतिहर मजदूरों को मवेशियों को चराने, आवंटित भूखंडों पर घर बनाने आदि जैसे सीमित अधिकार ही प्राप्त थे। उनका साइटों पर कोई अधिकार नहीं था, हालाँकि वे सुपर-स्ट्रक्चर के मालिक थे। साथ ही यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित और जुमला मुस्तरका के स्वामित्व में दर्ज की गई प्रत्येक भूमि अपने आप में पंचायत में निहित शामलात देह नहीं होगी, हालांकि प्रबंधन पंचायत के पास हो सकता है। ग्राम पंचायत ग्राम बशंबरपुरा बनाम सरदारा सिंह (1), हरियाणा राज्य और अन्य बनाम करनाल को-ऑप फार्मर्स सोसाइटी लिमिटेड आदि आदि का संदर्भ लिया जा सकता है। (2), माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ग्राम पंचायत में सामान्य भूमि के निहितार्थ को बरकरार रखते हुए कहा कि "मूल रूप से भूमि सभी निवासियों के उपयोग के लिए और सामान्य उद्देश्यों के लिए होती है, अर्थात भूमि में पूरे समुदाय के लिए होती है। लेकिन समय बीतने के साथ-साथ गांव की अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में, विशेष रूप से समतावादी समाज की परिस्थितियों में, गैर-मालिकों, ग्राम अर्थव्यवस्था से जुड़े मजदूरों को सुरक्षा और आत्म-सम्मान के साथ जीने का अधिकार प्रदान करने के लिए मालिकों ने गैर-मालिकों पर अपना अधिकार जमाना शुरू कर दिया है। ऐसी भूमि ग्राम पंचायत में निहित कर दी गई।

(19) के प्रावधानों का संक्षिप्त सर्वेक्षण पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स (रेगुलेशन) एक्ट, 1961 (इसके बाद इसे '1961 एक्ट' और ईस्ट पंजाब होल्डिंग्स (कंसोलिडेशन एंड प्रिवेंशन ऑफ विखंडन) एक्ट 1948 के रूप में संदर्भित किया गया है, चुनौती के आधारों को समझने और उनका आकलन करने के लिए शायद आवश्यक और आवश्यक है।

(20) विधायिका ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए कृषि उत्पादन और उत्पादकता में सुधार, सुविधाजनक और कुशल खेती, मशीनीकृत खेती के युग को सुनिश्चित करना, सामाजिक और नैतिक व्यवस्था और कृषि के विखंडन को रोकने की आवश्यकता को ध्यान में रखा। होल्डिंग्स ने 'समेकन अधिनियम, 1948' अधिनियमित किया।

(21) उठाए गए सवालों के जवाब देने की प्रक्रिया शुरू करने से पहले, जोत समेकन अधिनियम, 1948 के प्रावधानों के मूल संदर्भ की आवश्यकता है क्योंकि वही स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ताओं के संस्थापक दावे के प्रयोजनों के लिए आधार है। चकबंदी अधिनियम, 1948 का मूल डिज़ाइन यह है कि भूमि को सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित किया जा सकता है और इसका प्रबंधन और नियंत्रण या तो राज्य या गाँव की पंचायत में निहित होगा। मालिकों के अधिकार निश्चित रूप से संशोधित और समाप्त हो गए, इस शर्त के अधीन कि इस प्रकार आरक्षित भूमि या उनकी आय को ग्राम समुदाय के लिए विनियोजित किया जा सकता है। एकमात्र अपवाद यह था कि यदि आरक्षण आबादी देह या खाद गड्ढों के विस्तार के लिए था। यह उन मालिकों या गैर-मालिकों में निहित था जिन्हें यह आवंटित किया गया था।

(22) अधिनियम को प्रभावी बनाने के लिए, सामान्य उद्देश्यों के लिए भूमि के आरक्षण की प्रक्रिया, पैमाने, उपयोग के तरीके, प्रबंधन की व्यवस्था, भूमि का स्वामित्व किसके पास जारी रहेगा और राजस्व रिकॉर्ड में इसका वर्णन कैसे किया जाएगा, यह पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (चकबंदी और विखंडन की रोकथाम) नियम, 1949 (इसके बाद इसे "चकबंदी नियम, 1949" के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के नियम 16 द्वारा प्रदान किया गया था। पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (एकीकरण और विखंडन की रोकथाम) हरियाणा प्रथम संशोधन नियम 1970 (इसके बाद 'समेकन नियम 1970' के रूप में संदर्भित) के साथ पढ़ें।

(23) प्रतीकात्मक रूप से यह सामान्य उद्देश्यों को परिभाषित करता है जिसका सैद्धांतिक अर्थ गाँव की सामान्य आवश्यकता, सुविधा या लाभ है। इसे आगे आबादी देह के विस्तार की तरह विस्तृत किया गया, जिसमें ग्राम समुदाय के लाभ के लिए पंचायत की आय, सड़कें, रास्ते, नालियां, कुएं, तालाब, टैंक, जलधाराएं, या चैनल, बस स्टैंड, प्रतीक्षा स्थल, खाद के गड्ढे आदि उपलब्ध कराए गए। सार्वजनिक शौचालय, श्मशान घाट और कब्रिस्तान, पंचायत घर, झांझ घर, चारागाह, चर्मशोधन स्थल, नीरा मैदान, सार्वजनिक; धार्मिक और धर्मार्थ प्रकृति के स्थान, स्कूल, खेल के मैदान औषधालय, अस्पताल और समान प्रकृति के संस्थान, जल कार्य, ट्यूबवेल आदि, चाहे उनका प्रबंधन राज्य द्वारा किया जाए या नहीं।

(24) इसी प्रकार भूमि, स्वामित्व आदि को परिभाषित किया गया। प्रक्रियात्मक रूप से, चकबंदी अधिनियम, 1948 को प्रभावी बनाने के लिए, अधिनियम की योजना के तहत गांव की सभी भूमि को हॉटच में डाल दिया गया था और ग्रामीणों के परामर्श से चकबंदी की योजना तैयार की जाती थी। यह प्रयास किया जाता था, बल्कि यह सुनिश्चित किया जाता था कि इस प्रक्रिया में किसी को भी आर्थिक रूप से नुकसान न हो। अधिनियम की धारा 15 का संदर्भ लिया जा सकता है। सटीक रूप से प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान जो याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा संदर्भित किए गए थे, वे समेकन अधिनियम, 1948 की धारा 18 और 23-ए हैं। धारा 18 प्रदान करती है कि फिलहाल लागू किसी भी कानून में किसी भी बात के बावजूद, चकबंदी अधिकारी के लिए यह वैध होगा कि वह सामान्य उद्देश्यों के लिए पहले से आवंटित भूमि के स्थान पर किसी अन्य भूमि को निर्देशित या आवंटित करे और आगे सामान्य प्रयोजन के लिए नदी क्षेत्र जैसी भूमि आवंटित करे। इसी क्रम में अंततः यह प्रावधान किया गया कि सामान्य उद्देश्यों के लिए भूमि अपर्याप्त होने की स्थिति में, वह ऐसे उद्देश्यों के लिए अन्य भूमि आवंटित कर सकता है। अधिनियम की धारा 18 के प्रासंगिक प्रावधान निम्नानुसार हैं: -

"18 (सी) यदि चकबंदी के तहत किसी भी क्षेत्र में गांव की आबादी के विस्तार सहित किसी भी सामान्य उद्देश्य के लिए कोई भूमि आरक्षित नहीं है या यदि इस प्रकार आरक्षित भूमि अपर्याप्त है, तो ऐसे उद्देश्य के लिए अन्य भूमि आवंटित करने के लिए।" सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि को छोड़कर अन्य भूमि भागनीय थी।

(25) कानून सामान्य उद्देश्यों के लिए भूमि के आरक्षण का प्रावधान करते हुए, इसके प्रबंधन और नियंत्रण का भी प्रावधान करता है, - अधिनियम की धारा 23ए के तहत। यह निम्नानुसार चलता है:-

“23-ए. सामान्य प्रयोजनों के लिए भूमि का प्रबंधन और नियंत्रण पंचायतों या राज्य सरकार में निहित किया जाना। जैसे ही कोई योजना लागू होती है, धारा 18 के तहत गांव के सामान्य प्रयोजनों के लिए आवंटित या आरक्षित सभी भूमि का प्रबंधन और नियंत्रण किया जाता है।

(ए) धारा 2 के खंड (बीबी) के उप-खंड (iv) में निर्दिष्ट सामान्य उद्देश्यों के मामले में, जिसके संबंध में प्रबंधन और नियंत्रण राज्य सरकार द्वारा किया जाना है, राज्य सरकार में निहित होगा; और (बी) किसी अन्य सामान्य उद्देश्य के मामले में, उस गांव की पंचायत में निहित होगा; और राज्य सरकार या पंचायत, जैसा भी मामला हो, ग्राम समुदाय के लाभ के लिए उससे

होने वाली आय को विनियोजित करने की हकदार होगी, और ऐसी भूमि के मालिकों के अधिकार और हित तदनुसार संशोधित और समाप्त हो जाएंगे:

बशर्ते कि गांव की आबादी या गांव के मालिकों और गैर-मालिकों के लिए खाद के गड्ढों के विस्तार के लिए आवंटित या आरक्षित भूमि के मामले में, ऐसी भूमि उन मालिकों और गैर-मालिकों में निहित होगी, जिन्हें चकबंदी की योजना के तहत दी गई है। .अधिनियम की धारा 18-सी और 23-ए के सार और सार में कहा गया है कि सामान्य भूमि का प्रबंधन और नियंत्रण गांव की ग्राम पंचायत में निहित है, उस भूमि को छोड़कर जिसके संबंध में प्रबंधन और नियंत्रण राज्य में निहित है। मालिकों के अधिकारों को इस शर्त के अधीन संशोधित और समाप्त कर दिया गया कि भूमि या उनकी आय को ग्राम समुदाय के लिए विनियोजित किया जा सकता है, हालांकि साथ ही, आबादी देह के विस्तार के लिए आरक्षित भूमि या खाद के गड्ढे उन मालिकों या गैर-मालिकों में निहित होते हैं जिन्हें यह आवंटित किया गया था।

(26) निष्कर्ष की रूपरेखा अधिनियम की विभिन्न धाराओं की व्याख्या और समेकन अधिनियम के तहत बार में उद्धृत निर्णयों का पालन करती है। भगत राम और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (2), ग्राम पंचायत ग्राम सुखिया नंगल बनाम अतिरिक्त निदेशक, चकबंदी पंजाब और अन्य (3), काला सिंह बनाम आयुक्त, हिसार डिवीजन और अन्य (4), ग्राम पंचायत गुनिया माजरी बनाम निदेशक चकबंदी होल्डिंग्स और अन्य (5), देस राज और अन्य बनाम ग्राम लाढोत की ग्राम सभा और अन्य (6)), गुरदयाल सिंह और अन्य बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (7), ग्राम पंचायत सधरौर बनाम बलदेव सिंह और अन्य (8), ग्राम पंचायत ग्राम बशमेरपुरा बनाम सरदारा सिंह और अन्य (9), उभरते हैं:

(i) चकबंदी अधिनियम, 1948 कृषि सुधारों की प्रकृति में एक अधिनियम है। (ii) कोई भी भूमि पंचायत की आय के लिए सीधे या सामान्य उद्देश्यों की आड़ में या हड़पने के लिए आरक्षित नहीं की जा सकती;

(iii) हालाँकि सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि पर कब्ज़ा और प्रबंधन का अधिकार अंतिम रूप दिया जा सकता है, फिर भी यह राज्य द्वारा अधिग्रहण नहीं है। यह अधिकारों का संशोधन या समाप्ति हो सकता है।

(iv) जैसा कि अधिनियम के तहत परिभाषित किया गया है, सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित सामान्य भूमि के अपने इष्टतम उपयोग के बाद, शेष भूमि को आम बोलचाल की भाषा में स्वीकृत भूमि कहा जाता है और संबंधित व्यक्तियों को 'बाचटलैंड' के रूप में जाना जाता है।

आमतौर पर इसे पंचायत द्वारा पट्टे पर दिया जाता है, बावजूद इसके इसका स्वरूप नहीं बदलता है। इसका वर्णन राजस्व अभिलेखों में नियम 16 अर्थात शामलात देह, हसब रसद खेवत के अनुसार किया गया है। यह देखा गया कि भूमि के इस प्रकार और प्रकृति का स्वामित्व उन स्वामियों के पास जारी रहा, जिनकी भूमि आनुपातिक कटौती लागू करके बनाई गई थी। परंपरागत रूप से, सामान्यतः और अन्यथा भी इसे मालिकों के बीच पुनर्वितरित किया जाता था। भूमि को जुमला मुस्तर्का मल्कान के रूप में वर्णित किया गया है अर्थात खेती के तहत भूमि के संबंधित क्षेत्र के अनुपात में मालिकों और अन्य अधिकार धारकों द्वारा संयुक्त स्वामित्व।

(27) 1961 के अधिनियम के तहत स्पष्ट प्रासंगिक समग्र चित्र, अधिनियम की वैधता और अधिकार पर व्यापक केंद्रित हमले पर विचार करने के लिए आवश्यक और आवश्यक प्रस्तावना है:

(28) शामलात देह 1961 के अधिनियम की सर्वोत्कृष्टता है। यह ग्राम समुदाय के सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि है। यह अधिनियम की मूल विशेषता है। यह पूरे अधिनियम को इतना पूर्व निर्धारित करता है कि अधिनियम ने शामलात देह की एक अपमानजनक परिभाषा भी प्रदान की है।

(29) विधायिका ग्रामीण जीवन की सामाजिक-आर्थिक वास्तविकताओं और उपयोग और रीति-रिवाजों द्वारा स्थापित अधिकारों के प्रति जागरूक थी जो ग्रामीण जीवन की जमीनी वास्तविकताओं में अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी है। मैं कहने का साहस कर सकता हूं। यह अधिनियम विभिन्न प्रकार की भूमि या अचल संपत्तियों जैसे शामलात देह, चरंद, बंजार कादिम, शामलात टिक्का, शामलात तरफ, पट्टी और थोलस को पूरे क्षेत्र के रूप में परिभाषित करता है, जिसका उपयोग ग्राम समुदाय या उसके हिस्से के लाभ के लिए किया जाता है। जो राजस्व रिकार्ड में शामलात देह दर्ज है। आबादी देह या

गोरा देह के भीतर ग्रामीण समुदाय के लाभ के लिए खेल के मैदान, सड़कें, स्कूल, पीने के कुएं या तालाब आदि के लिए उपयोग की जाने वाली या आरक्षित भूमि शामलात देह की समझी गई परिभाषा के अंतर्गत आती है। शामलात देह और चारंद पर लगाई गई एकमात्र सीमा यह है कि यह गांव के कुल क्षेत्रफल का 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए, जिसके आगे इसका विशेष तरीके से उपयोग प्रदान किया जाता है। शामलात "देह" की परिभाषा में अपवाद प्रदान करके कुछ भूमियों को 1961 के अधिनियम के दायरे से बाहर कर दिया गया, अर्थात इन्हें छोड़कर, ये भूमि शामलात देह की परिभाषा से बाहर हैं, हालांकि ये शामलात देह हैं। ये भूमि शामलात देह/चरंद/ बन गई हैं। विस्थापित व्यक्तियों को नदी की धारा के कारण आवंटित चरागाह/खेल के मैदान, 26 जनवरी, 1950 से पहले विभाजित और स्व-खेती के तहत लाए गए, सह-हिस्सेदारों से मालिकाना भूमि की खरीद या विनिमय द्वारा प्राप्त की गई जो कि उनके शेयरों से अधिक नहीं है शामलात देह, भूमि के लिए निर्धारित भूमि ■ 26 जनवरी, 1950 की कटौती तिथि पर सह-हिस्सेदारों की स्वयं की खेती के तहत उनके शेयरों से अधिक नहीं होने वाले राजस्व को शामलात देह की परिभाषा से बाहर रखा गया है। गीतावार, बारा, खाद गड्ढों के लिए उपयोग की जाने वाली भूमि तिथि के अनुसार, पूजा स्थल सहित आबादी देह के बाहर स्थित कुटीर उद्योगों को शामलात देह नहीं माना जाता था जैसा कि आमतौर पर सामान्य बोलचाल में समझा या संदर्भित किया जाता है। पंजाब ग्राम की धारा 2 (जी) का संदर्भ लिया जा सकता है सामान्य भूमि (विनियमन) अधिनियम 1961 (1961 का पंजाब अधिनियम 18) 1981 के हरियाणा अधिनियम 20 के संशोधन के रूप में (इसके बाद सामान्य भूमि अधिनियम, 1981 के रूप में संदर्भित)।

(30) सामान्य भूमि अधिनियम, 1981 की धारा 4 के अनुसार, शामलात देह में सभी अधिकार, शीर्षक या हित ग्राम पंचायत में निहित हैं, जिसका गांव पर अधिकार क्षेत्र है, सिवाय उस भूमि के अपवाद के जो गैर-मालिकों के पास है और उनमें निहित है। अधिनियम की योजना के तहत विधानमंडल ने पंचायतों द्वारा उपयोग, प्रबंधन निपटान आदि के लिए प्रावधान किया। अधिनियम की धारा 7 अधिनियमित करके पंचायतों को कब्ज़ा दिलाने के लिए सारांश प्रक्रिया प्रदान की गई। शामलात देह से संबंधित विवाद को निर्धारित करने के लिए सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को धारा 13 के तहत बाहर रखा गया था, हालांकि पहले शामलात देह के रूप में भूमि की प्रकृति का निर्धारण करने या ग्राम पंचायतों में इसके स्वामित्व को निहित करने के लिए एक वैकल्पिक उपाय प्रदान किया गया था। किसी व्यक्ति का कोई अन्य अधिकार या उपाधि। अब 1992 के अधिनियम द्वारा इन प्रावधानों को हटा दिया गया है।

(31) इस स्तर पर, मैं अधिनियम पर राष्ट्रपति की सहमति के मुद्दे पर विचार कर सकता हूं। बहस के दौरान, याचिकाकर्ताओं के वकील ने स्वीकार किया कि यह बिंदु निर्धारण के लिए नहीं बचा है क्योंकि तथ्यात्मक रूप से राष्ट्रपति की सहमति है।

(32) अधिनियम की पूर्वोक्त योजना और दी गई समग्र तस्वीर के साथ, टी पहले 1992 के अधिनियम की धारा 2 को संदर्भित करने के लिए आगे बढ़ सकता है, जिसकी संवैधानिकता और वैधता चुनौती का मुख्य जोर थी। चुनौती के तहत प्रासंगिक धारा निम्नानुसार चलती है: -

“धारा 2(क्यू)(4)> :

पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम, 1952 की धारा 3 के खंड (एमएमएम) में परिभाषित सभा क्षेत्र के भीतर स्थित ग्राम समुदाय के लाभ के लिए उपयोग की गई या आरक्षित भूमि, जिसमें सड़कें, गलियां, खेल के मैदान, स्कूल, पीने के कुएं या तालाब शामिल हैं। पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (एकीकरण और विखंडन की रोकथाम) अधिनियम की धारा 18 के तहत गांव के सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि को छोड़कर। उपरोक्त अधिनियम की धारा 23 के तहत प्रबंधन और नियंत्रण राज्य में निहित है।

“धारा 2(क्यू)(6) :

पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (एकीकरण और विखंडन की रोकथाम) अधिनियम 1948 <पूर्वी पंजाब अधिनियम 50, 1948) की धारा 18 के तहत गांव के सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि। उपरोक्त अधिनियम की धारा 23-ए के तहत इसका प्रबंधन और नियंत्रण ग्राम पंचायत में निहित है।

स्पष्टीकरण.-जुमला मलकान वा हकदारन, रजी हसद रसद, जुमला मालकान या मुश्तर्का मालकान के अधिकारों के रिकॉर्ड के कॉलम में दर्ज की गई भूमि इस धारा के अर्थ के भीतर शामलात देह होगी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विभिन्न न्यायिक निर्णयों में इसे अनिवार्य रूप से देखा गया है और ग्रंथों में आगे कहा गया है कि मानवीय उद्देश्य स्पष्टता के साथ अभिव्यक्ति में सक्षम रूप से मिश्रित होते हैं। कानून के इरादे को समझने के प्रयास में, अधिनियम की जमीनी हकीकत, सार और सार में उत्पन्न प्रभावों को देखना होगा। ऐसा करते समय, अधिनियम की अवधारणा, उद्देश्य जिसे वह प्राप्त करना और स्पष्ट करना चाहता था, समाज के लिए इसका लाभ, व्यक्ति और समाज पर इसका प्रभाव, अधिनियम के स्वरूप के बावजूद, कुछ ऐसे कारक हैं जिन पर ध्यान दिया गया। क़ानून की भाषा से संबंधित निर्माण पर न्यायालय वैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ उद्देश्य को भी समझाते हैं, कानून की सेवा करने का इरादा है, जिसे आम तौर पर अधिनियम की भाषा और अधिनियम के उद्देश्य और दायरे से पूरी तरह से उजागर किया जाना चाहिए, न्याय को पराजित करने या स्वीकृत मानदंडों के साथ प्रतिकूलता पैदा करने वाले हाइपरटेक्निकल विश्लेषण की अनुमति के बिना। न्याय और कारण. यह कहने में कोई लाभ नहीं है कि सामाजिक प्रभाव के बिना व्यक्तिगत अधिकारों का प्रभाव अस्तित्व में ही नहीं रह सकता। यह व्यक्तिगत अधिकार और सामाजिक प्रभाव है जिसे संतुलित करना होगा। उनमें से किसी को भी दूसरे का स्वामी बनने की अनुमति नहीं दी जा सकती। रणजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (10) का संदर्भ लिया जा सकता है।

(33) फिर से यह एक हितकारी सिद्धांत है कि सभ्य समाज में कानूनों द्वारा संचालित सरकार के दायरे में आमतौर पर नीति का शासन होता है जो स्थिरता, निश्चितता और पूर्वानुमेयता को बढ़ावा देता है, का पालन किया जाना चाहिए। सामान्य कानून में कहा गया है कि सिस्टम को अपने लोगों को स्पष्ट आचार संहिता प्रदान करनी चाहिए ताकि वे आश्चर्य के खिलाफ आश्वासन के साथ अपने मामलों की योजना बनाने में सक्षम हो सकें। उसी संदर्भ में, ग्रामीण जीवन की कमजोर स्थितियों को ध्यान में रखते हुए विवादित कानून की व्याख्या की जानी चाहिए, खासकर जब इसमें अप्रत्यक्ष माध्यमों से निजी भूमि का मालिक बनने की नई महत्वाकांक्षा पाई गई हो) बिना अधिग्रहण के और आगे दी गई संवैधानिक सुरक्षा से परहेज करते हुए। नागरिकों को अधिकतम सीमा के भीतर भूमि रखने का अधिकार। किसी को यह ध्यान रखना होगा कि वैधानिक शब्दों की व्याख्या करने के प्रयास में उत्पन्न अंतिम परिणाम से उसे नकारा नहीं जा सके। किसी क़ानून की व्याख्या करते समय उसके सार को उसके औचित्य और समता की परवाह किए बिना पाया जाता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि किसी को यह देखना होगा कि क्या विवादित कानून उस अनुच्छेद के अनुरूप है जिसका उल्लंघन किया गया है, जिसे कानून के चारों ओर बनाए गए पर्दे या आवरण को फाड़कर और छेदकर किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। अनगिनत उदाहरणों में यह देखा गया है कि आम तौर पर अदालतें नैतिकता या दर्शन से संबंधित नहीं होती हैं, बल्कि क़ानून से संबंधित होती हैं। कोक ने कथित तौर पर कहा कि कानून के दायरे की सही ढंग से सराहना करने के लिए यह पूछा जाना चाहिए (i) अधिनियम पारित होने से पहले कानून क्या था; (ii) वह कौन सी शरारत या दोष था जिसके लिए कानून ने प्रावधान नहीं किया था; (iii) विधान ने क्या उपाय प्रदान किया है (iv) उपाय के कारण। 'एस. सुंदरम' का संदर्भ लिया जा सकता है। पिल्लई, आदि बनाम आर. पट्टाभिरामन (11)।

(34) कानून की व्याख्या करते समय एक और सिद्धांत को ध्यान में रखना चाहिए कि विधायी प्राधिकारी को देश के कानून को जानने के लिए माना जाता है।

(35) पथुम्मा बनाम केरल राज्य (12) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि किसी क़ानून की व्याख्या करने के सिद्धांतों में से एक यह है कि आम तौर पर जिस चीज़ को सीधे तौर पर प्रतिबंधित किया जाता है, उसे अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उसी स्थान पर यह देखा गया कि निर्माण के सिद्धांतों का प्रभाव यह है कि जहां किसी कार्य को करने का तरीका स्पष्ट रूप से प्रदान किया जाता है, वह आवश्यक रूप से उसी कार्य को दूसरे तरीके से करने पर रोक लगाता है।

(36) यहां संविधान के उन प्रावधानों पर ध्यान देना समीचीन होगा जिनके उल्लंघन का आरोप लगाया गया है: -

अनुच्छेद 31-ए :

सम्पदा आदि के अधिग्रहण हेतु प्रावधान करने वाले कानूनों को बचाना:-

(1) अनुच्छेद 13 में किसी बात के होते हुए भी, कोई कानून यह प्रावधान नहीं करता-

(ए) राज्य द्वारा उसमें किसी भी अधिकार का अधिग्रहण या ऐसे किसी भी अधिकार का समापन या संशोधन, या

(बी) सार्वजनिक हित में या संपत्ति के उचित प्रबंधन को सुरक्षित करने के लिए राज्य द्वारा किसी संपत्ति का प्रबंधन सीमित अवधि के लिए अपने हाथ में लेना, या

(सी) सार्वजनिक हित में या किसी भी निगम के उचित प्रबंधन को सुरक्षित करने के लिए दो या दो से अधिक निगमों का एकीकरण, या

(डी) निगम के प्रबंधन एजेंटों, सचिवों और कोषाध्यक्षों, प्रबंध निदेशकों, निदेशकों या प्रबंधकों के किसी भी अधिकार को समाप्त करना या संशोधित करना, या उसके शेयरधारकों के किसी भी मतदान अधिकार को समाप्त करना या संशोधित करना, या

(ई) किसी खनिज या खनिज तेल की खोज करने या जीतने के उद्देश्य से किसी समझौते, पट्टे या लाइसेंस के आधार पर अर्जित किसी भी अधिकार का उन्मूलन या संशोधन, या ऐसे किसी भी समझौते, पट्टे या लाइसेंस को समय से पहले समाप्त करना या रद्द करना . इस आधार पर शून्य माना जाएगा कि यह (अनुच्छेद 14जे या अनुच्छेद 19) द्वारा प्रदत्त किसी भी अधिकार से असंगत है, या छीनता है या कम करता है।

(37) बशर्ते कि जहां ऐसा कानून किसी राज्य के विधानमंडल द्वारा बनाया गया कानून है, इस अनुच्छेद के प्रावधान उस पर तब तक लागू नहीं होंगे जब तक कि ऐसा कानून, राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित होने पर, उनकी सहमति प्राप्त न कर ले:

बशर्ते कि जहां कोई भी कानून राज्य द्वारा किसी एस्टेट के अधिग्रहण के लिए कोई प्रावधान करता है और जहां उसमें शामिल किसी भी भूमि को किसी व्यक्ति द्वारा उसकी व्यक्तिगत खेती के तहत रखा जाता है, तो राज्य के लिए ऐसी भूमि के किसी भी हिस्से का अधिग्रहण करना वैध नहीं होगा। किसी भी कानून के तहत उस पर लागू अधिकतम सीमा के भीतर है; कुछ समय के लिए लागू या उस पर खड़ी किसी इमारत या संरचना या उससे जुड़ी, जब तक कि ऐसी भूमि, भवन या संरचना के अधिग्रहण से संबंधित कानून ऐसी दर पर मुआवजे के भुगतान का प्रावधान नहीं करता है जो बाजार मूल्य से कम नहीं होगी।

(2) (ए) अभिव्यक्ति "संपदा" का, किसी भी स्थानीय क्षेत्र के संबंध में, वही अर्थ होगा, जो उस अभिव्यक्ति या उसके स्थानीय समकक्ष का उस क्षेत्र में लागू भूमि कार्यकाल से संबंधित मौजूदा कानून में है और यह भी होगा शामिल^-

(i) कोई जागीर, इनाम या मुआफ़ी या अन्य समान अनुदान और तमिलनाडु और केरल राज्यों में कोई जन्म अधिकार;

(ii) रोटवारी बंदोबस्त के तहत धारित कोई भी भूमि;

(iii) कृषि प्रयोजनों के लिए या उसके सहायक प्रयोजनों के लिए धारित या किराये पर दी गई कोई भी भूमि, जिसमें बंजर भूमि, वन भूमि, चारागाह के लिए भूमि या भूमि पर खेती करने वालों, खेतिहर मजदूरों और गांव के कारीगरों द्वारा कब्जा की गई इमारतों और अन्य संरचनाओं के स्थान शामिल हैं;

(बी) किसी संपत्ति के संबंध में अभिव्यक्ति "अधिकार" में मालिक, उप-मालिक, मालिक के अधीन, किरायेदार-धारक, (रैयत, अंडर-रैयत) या में निहित कोई भी अधिकार शामिल होगा। अन्य मध्यस्थ और भू-राजस्व के संबंध में कोई अधिकार या विशेषाधिकार।

(38) आक्षेपित अधिनियम की शक्तियों का परीक्षण करने के लिए, यह देखना होगा कि जिस क़ानून को चुनौती दी गई है वह उन अनुच्छेदों के साथ पुष्टि करता है जिनका उल्लंघन किया गया है, हो सकता है कि वह उस लबादे को भेदने का पर्दा

फाड़ दे जिसे कानून पहनने के लिए बनाया गया है। अनुच्छेदों को पढ़ने से, यह स्पष्ट रूप से समझ में आता है कि संविधान ने किसी नागरिक की संपत्ति के अधिकार की अवधारणा के संबंध में आ रहे व्यापक परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए अधिग्रहण के संबंध में कानून बनाने के विधान पर प्रतिबंध लगा दिया है। समाज के व्यापक लाभ के लिए इसे हासिल करना राज्य का अधिकार है। अधिग्रहण के राज्य के अधिकार और अधिग्रहण के लिए कानून बनाने के विधायिका के अधिकार पर प्रदान की गई सीमा स्वतंत्रता की मूल अवधारणा के अनुरूप है, जो हमारे संविधान की पहचान है।

(39) संविधान के अनुच्छेद 31-ए के संदर्भ में अधिग्रहण, जैसा कि न केवल कानूनी दुनिया में समझा जाता है, जैसा कि शीर्ष न्यायालय के कई निर्णयों द्वारा स्थापित किया गया है, बल्कि सामान्य बोलचाल में भी समझा जाता है।इसमें कुछ स्थापित सर्वोत्कृष्टता और आवश्यक विशेषताएं हैं जैसे की वह राज्य द्वारा किसी संपत्ति को छीन रहा है, राज्य के लिए, उसे संपत्ति का स्वामित्व राज्य को हस्तांतरित करना होगा।आमतौर पर, यह शीर्षक, स्वामित्व, हित और कब्जे का पूर्ण हस्तांतरण है यानी संपत्ति में सभी पेटेंट या गुप्त अधिकार। अधिकारों का पूर्णतः खात्मा होना चाहिए। केवल एक निश्चित या अनिश्चित काल के लिए निलंबन या अधिकार या प्रबंधन अपने हाथ में लेना अधिग्रहण नहीं होगा। वह कानून जो किसी व्यक्ति को संपत्ति से वंचित करता है लेकिन संपत्ति का स्वामित्व या कब्जे का अधिकार हस्तांतरित नहीं करता है, वह अधिग्रहण का प्रावधान करने वाला कानून नहीं है। यह कहा जा रहा है कि राज्य निजी संपत्ति को नष्ट तो कर सकता है, लेकिन उसे अपने अधिकार में नहीं ले सकता। जमालपुर ग्राम पंचायत बनाम मालविंदर सिंह (14), डीजीमहाजन बनाम महाराष्ट्र राज्य (15), बिहार राज्य बनाम प्रताप सिंह (16), गुजरात राज्य बनाम शांति लाई (17), भगत पाम और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (18) का संदर्भ लिया जा सकता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 द्वारा परिभाषित 'राज्य' को अच्छी तरह से समझा जाता है। यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि मुआवजे के भुगतान के बिना किसी भी व्यक्ति को अधिकतम सीमा के भीतर उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि 1948 के चकबंदी अधिनियम के तहत सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित सभी भूमियों को इस प्रकार वर्णित किया गया है: चकबंदी नियमों के तहत शामलात देह की एक घृणित परिभाषा प्रदान करके, 1992 के संशोधन अधिनियम द्वारा शामलात देह को 1961 के अधिनियम के तहत शामलात देह की परिभाषा के दायरे में लाया गया था।

(14) ए.आई.आर. 1985 एस.सी. 1394|

(15) ए.आई.आर. 1977 एस.सी. 915|

(16) ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 164|

(17) ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 634|

(18) ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 927|

मेरा मानना है कि 1992 के अधिनियम द्वारा अधिनियम में किए गए संशोधन के आवश्यक परिणाम के रूप में, चकबंदी अधिनियम, 1948 के तहत आरक्षित भूमि पंचायतों की संपत्ति बन गई, बल्कि 1961 के अधिनियम के तहत इसका स्वामित्व अनाज पंचायतों में निहित हो गया। यह ग्राम पंचायत ही है जो संपदा की स्वामित्व धारक बन गई। संविधान के अनुच्छेद 12 के अनुसार पंचायत एक राज्य है।

(40) 1992 के अधिनियम की धारा 2 (जी) (6) को जोड़कर इसे किसी भी संदेह से परे रखा गया है, जिसमें चकबंदी अधिनियम की धारा 18 के तहत सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि, जो प्रबंधन के अधीन थी या ग्रामपंचायत का नियंत्रण शामलात देह घोषित किया गया। स्पष्टीकरण आगे स्पष्ट करता है कि, चकबंदी अधिनियम, 1948 के तहत आरक्षित

भूमि और नियमों के तहत "जुमला मल्कान वा दीगर हकदारन अराजी हस्साब रसद जुमला मालकान या मुश्तरका मालकान" के रूप में वर्णित भूमि धारा के अर्थ में शामलात देह होगी।

(41) अधिग्रहण से संबंधित कानून बनाने के लिए विधानमंडल की शक्तियों पर संविधान द्वारा कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है। किसी को उचित मुआवजे का भी अधिकार नहीं है |संविधान के अनुच्छेद 31-ए के संदर्भ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसे स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है। यदि कोई कानून किसी संपत्ति के राज्य द्वारा अधिग्रहण के लिए कोई प्रावधान करता है, यानी किसी व्यक्ति द्वारा उसकी खेती के तहत रखी गई संपत्ति में शामिल किसी भी भूमि को उस समय लागू किसी भी कानून के तहत उस पर लागू होने वाली अधिकतम सीमा के भीतर, जिसमें कोई इमारत या संरचना भी शामिल है , राज्य इसे मुआवज़ा प्रदान या भुगतान किए बिना प्राप्त नहीं करेगा, जो इसके बाज़ार मूल्य से कम नहीं होगा।

(42) संविधान के अनुच्छेद 31-ए के उल्लंघन में बनाया गया कानून कानून द्वारा संरक्षित नहीं है, सिवाय इसके कि जब इसे संविधान के अनुच्छेद 31-बी के तहत 9वीं अनुसूची में रखकर संरक्षित किया गया हो। इस प्रकार, संवैधानिक रूप से राज्य किसी व्यक्ति की भूमि को उसके पूर्ण बाजार मूल्य के भुगतान पर एक अधिकतम सीमा के भीतर ही अधिग्रहित कर सकता है। यह न केवल निषेध के समान है बल्कि नागरिकों को अधिकतम सीमा के भीतर भूमि रखने का अधिकार भी प्रदान करता है। इसके अलावा अधिग्रहीत भूमि के लिए मुआवजे का अधिकार सुनिश्चित किया गया है।

(43) मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है और न ही किसी भी पक्ष के वकील द्वारा व्यक्त किया गया है कि यह अधिनियम कृषि सुधार के माध्यम से है। मेरे विचार में, प्रमुख उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अधिनियम की धारा 2 (जी) (6) की व्याख्या के साथ पढ़ी गई शामलात देह की परिभाषा द्वारा प्रदान की गई व्याख्या यह है कि चकबंदी के दौरान सामान्य प्रयोजनों के लिए आरक्षित भूमि थी उन मालिकों को, जिन्हें ग्राम पंचायत में निहित करके जोत समेकन अधिनियम, 1948 द्वारा प्रदान किए गए प्रबंधन के बजाय उनके स्वामित्व से वंचित कर दिया गया था। अब संवैधानिक प्रावधानों के उल्लंघन के खिलाफ कानून पर पर्दा डालने के लिए अपनाई गई अप्रत्यक्ष कार्यप्रणाली ने वास्तव में भूमि का स्वामित्व पंचायत को सौंप दिया। यद्यपि यह कृषि सुधार है, फिर भी इसे संवैधानिक वैधता को संतुष्ट करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 31-ए की निरर्थकता को संतुष्ट करना होगा। इसमें कोई संदेह नहीं है, कृषि सुधारों का व्यापक उद्देश्य कृषि उत्पादन और उत्पादकता को अधिकतम करना, कृषि आय का उचित न्यायसंगत वितरण, रोजगार के अवसरों और सामाजिक और नैतिक व्यवस्था को बढ़ाना है।

(44) मेरे विचार में, हालांकि इस अधिनियम का उद्देश्य देश के भौतिक संसाधनों को वितरित करना है, फिर भी प्रशंसनीय अधिनियम के तहत, यह पीटर को संपत्ति से वंचित करके पॉल को देने के अलावा और कुछ नहीं है। यह घड़ियाली आंसू बहाने और अभिशाप या वर्जना के अलावा और कुछ नहीं है या ग्राम पंचायत को अनैतिक रूप से समृद्ध करने के समान होगा। विधायिका ने काला सिंह के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को पार करने का प्रयास किया है, जिसमें यह देखा गया था कि चकबंदी कार्यवाही के दौरान सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि 1961 के अधिनियम के तहत शामलात देह की परिभाषा में नहीं आती है। निर्णय का शुद्ध परिणाम यह था कि निर्णय के पहले भाग में वर्णित भूमि का स्वामित्व मालिकों के पास था।

(45) मुझे उस चुनौती में ताकत दिखती है जो पूरी तरह से कानूनी है। हमारे सामने चुनौती के विषय के प्रावधानों के सही उपदेशों में, केवल एक और एक ही निष्कर्ष निकलता है, कि चकबंदी की कार्यवाही के दौरान सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि, मालिकों की भूमि से बाहर, चकबंदी नियमों के तहत उनकी भूमि पर आनुपातिक कटौती लागू करके सीलिंग लिमिट के भीतर| चकबंदी नियमों/अधिनियम के तहत वर्णित या नामित भूमि, जिसका प्रबंधन पंचायत में निहित है और स्वामित्व मालिकों के पास जारी है और अब ग्राम पंचायतों में निहित है। यह ग्राम पंचायत ही है जो अपने सभी शीर्षकों की स्वामी बन जाती है, चाहे उनका स्वरूप कुछ भी हो। मालिकों या इसके उपयोगकर्ताओं को इसके सभी हितों से वंचित

कर दिया गया। यदि मैं ऐसा कह सकता हूं, तो राज्य का यह कृत्य बिना कोई मुआवजा दिए संपत्ति का अधिग्रहण करना और उसके बाद इसे किसी अन्य प्राधिकारी यानी ग्राम पंचायत को आवंटित करना संविधान के अनुच्छेद 31-ए का पूर्ण उल्लंघन है। प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 31-ए के अनुरूप नहीं होने के दोष से ग्रस्त हैं। यह वह कार्य करना एक दिखावटी और छिपा हुआ उद्देश्य है जिस पर संविधान विशेष रूप से प्रतिबंध लगाता है।

(46) यह माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से देखा गया था अजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (19), और भगत राम के मामले में, (सुप्रा) कि चूँकि केवल सामान्य उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि का प्रबंधन ही ग्राम पंचायत को दिया जाता है, जो सामान्य भलाई के लिए होता है और चूँकि मालिकों को उनके स्वामित्व से वंचित नहीं किया गया है, इसलिए पंचायतें स्वयं का स्वामित्व या हित प्राप्त नहीं करती हैं। इन टिप्पणियों के मद्देनजर चकबंदी कार्यवाही में सामान्य उद्देश्यों के लिए भूमि के आरक्षण को अच्छा माना गया।

(19) ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 856|

(47) निर्णय के पहले भाग में दिए गए समान और समान तर्क के आधार पर, कानून एक अधिनियम की आड़ में मालिकों की भूमि को आम अच्छे के लिए आरक्षित नहीं कर सकता है और उन्हें अपने प्रबंधक में निहित करने के लिए उनके शीर्षक से वंचित नहीं कर सकता है, जिसे अन्य अधिनियम द्वारा लागू किया गया है। ऊपर उद्धृत निर्णयों का तर्क यह है कि प्रबंधन का अधिग्रहण न होना अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन नहीं है।

(48) चीजों की प्रकृति के अनुसार हर किसी को जमीन नहीं दी जा सकती। भारत के संविधान ने अब तक जोत की सीमा के संबंध में एक अच्छी तरह से स्थापित अधिसूचना प्राप्त कर ली है। यह व्यक्तियों को अधिकतम सीमा के भीतर भूमि रखने के लिए सुरक्षा प्रदान करता है। मेरे विचार में, विधायिका को किसी व्यक्ति को अधिकतम सीमा के भीतर उसकी भूमि के स्वामित्व से वंचित करने वाला कानून बनाकर रंगीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, खासकर जब स्वतंत्रता की अवधारणा एक नया मोड़ ले रही है यानी किसी व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार विकास करने और प्राप्त करने का अवसर प्रदान कर रही है। यह एक ऐसा युग है जहां हमने यह मान लिया है कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सभी को प्रदान किया जाएगा और कम से कम सभी व्यक्तियों को सम्मान प्रदान किया जाएगा। कृषि प्रधान समाज में उदारीकरण की अधिक आवश्यकता है क्योंकि हम न्याय की आशा रखते हैं, खासकर जब अनुभव वैज्ञानिक रूप से विकसित, यंत्रीकृत खेती के उन्नत युग में छोटी जोत की अपेक्षा को झुठलाता है। चूंकि छोटे पैमाने की खेती विशेष रूप से रोजगार में तीव्र मंदी के युग में स्व-रोज़गार का व्यवहार्य अवसर प्रदान नहीं कर सकती है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि संवैधानिक प्रक्रिया द्वारा प्रतिपादित दर्शन मध्यम वर्ग को ऊपर की ओर ले जा रहा है, नीचे की ओर नहीं बढ़ा रहा है और न ही घटा रहा है।

(49) संशोधित परिभाषा को बरकरार रखते हुए, हम तय किए गए दावों और शीर्षकों को उलटने और काफी व्यवस्थित समाज के वैध मामलों में अराजकता और भ्रम पैदा करने में उचित नहीं होंगे। मैं यह भी जोड़ सकता हूं, जैसा कि फैसले के पहले भाग में देखा गया है, सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि, आरक्षित उद्देश्य के लिए अधिकतम उपयोग के बाद, उन व्यक्तियों को वितरण के लिए वापस दी जानी थी जिनके पास इसका स्वामित्व था।

(50) फिर से संवैधानिक रूप से निर्णय लेने के लिए प्रदान किए गए परीक्षण के इतिहास पर कि न्यायालयों के लिए यह तय करना आवश्यक होगा कि क्या कानून राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों में से किसी को सुरक्षित करता है, क्या मौलिक

अधिकारों का अतिक्रमण करना आवश्यक है जो कि इस तरह की सीमा है अतिक्रमण मूल संरचना का उल्लंघन या अतिक्रमण नहीं करता है। एक वास्तविक लोकतांत्रिक नीति में राज्य की कार्रवाई की वैधता को उसके संचालन के आलोक में तय किया जाना चाहिए। इसमें शामिल अधिकारों की प्रकृति, पीड़ित व्यक्तियों के हित, व्यक्तियों के अधिकारों की हानि के रूप में राज्य की कार्रवाई से होने वाले नुकसान की डिग्री और विवादित कार्रवाई करने के लिए राज्य के उद्देश्य को ध्यान में रखना होगा।

(51) अपरिहार्य निष्कर्षों को ध्यान में रखना होगा और सिद्धांतों में कहा गया है कि राज्य की कार्रवाई की वैधता को सभी आयामों में व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों के अधिकारों पर इसके संचालन के प्रकाश में तय किया जाना चाहिए। किसी अधिकार को केवल मौखिक रूप से घोषित करना और व्यावहारिक रूप से उसे असंभव बना देना एक मनमाना कानून होगा।

(52) किसी कानून की तर्कसंगतता के लिए संतुष्ट होने के लिए आवश्यक बुनियादी परीक्षणों में से एक यह देखना है कि लगाया गया प्रतिबंध अधिकार के प्रयोग के खिलाफ सार्वजनिक हित की सुरक्षा की आवश्यकता के अनुरूप है, भले ही भूमि के मालिक को आर्थिक नुकसान हुआ हो। यह अपने आप में कानून को अनुचित ठहराने का कोई मानदंड नहीं है। यह अधिकार के उल्लंघन की प्रकृति और प्रतिबंध का अंतर्निहित उद्देश्य, बुराई की सीमा और बुराई की तात्कालिकता, उस समय की मौजूदा स्थितियाँ हैं, जिनका ध्यान रखा जाना चाहिए। न्यायालयों को नाम और रूप के पीछे देखना होगा और कानून की वास्तविक प्रकृति को प्रकट करने का प्रयास करना होगा।

(53) मुझे कानून पर बाध्यकारी संवैधानिक निषेधों के संबंध में कानून से संबंधित नियम पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है, कि विधायिका केवल उन्हीं परिणामों को प्राप्त करने के अप्रत्यक्ष तरीकों को स्पष्ट या लागू करके निषेध की अवज्ञा नहीं कर सकती है जो संविधान निषिद्ध है।

(54) मेरे विचार में विधायिका ने संशोधित परिभाषा/प्रावधानों को लागू करके अपनी शक्तियों का उल्लंघन किया है और यह कार्रवाई अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन करते हुए बिना मुआवजे के भूमि अधिग्रहण के समान है। अपराध खुला, प्रत्यक्ष या प्रकट, प्रच्छन्न और अप्रत्यक्ष या गुप्त हो सकता है, यह रंगीन कानून होगा। संविधान का उल्लंघन इतना स्पष्ट है कि किसी भी उचित संदेह के लिए कोई जगह नहीं बचती।

(55) मेरे विचार में, परिभाषा खंड की संवैधानिकता का निर्णय करते समय, राज्य की कार्रवाई को सभी आयामों में व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों पर इसके संचालन के प्रकाश में आंका जाना चाहिए और ऐसा करने पर यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि अधिनियम भूमि में अधिकारों की समाप्ति का प्रावधान करता है। भगत राम के मामले में (सुप्रा) यह, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा देखा गया है, "आय का उपयोग किस उद्देश्य से किया जा सकता है, यह देखने और एक प्रकार के अभाव और दूसरे प्रकार के अभाव के बीच अंतर करने का कोई सवाल ही नहीं है। हमारे अनुसार कानून द्वारा निर्धारित सीमा को राज्य द्वारा अधिग्रहण से तब तक कम नहीं किया जा सकता जब तक कि बाजार दर पर मुआवजा न दिया जाए। किसी अन्य प्रतिपूरक कारक पर ध्यान नहीं दिया जा सकता है।"

(56) ऊपर उद्धृत टिप्पणियों के मद्देनजर, 1961 के अधिनियम की धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) जोत समेकन अधिनियम, 1948 के तहत सामान्य प्रयोजन के लिए आरक्षित भूमि का वर्णन करती है- 1961 के अधिनियम के तहत शामलात देह के रूप में उनकी अधिकतम सीमा के भीतर भूमि मालिकों की जोत में आनुपातिक कटौती के आवेदन द्वारा और चूंकि ये जमीनें पंचायतों में निहित कर दी गई हैं, इसलिए यह कार्रवाई अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन है। चूँकि धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) की परिभाषाएँ इतनी आपस में जुड़ी हुई हैं कि किसी भी भाग को अलग नहीं किया जा सकता है

और अधिकारातीत नहीं माना जा सकता है और इन धाराओं ने मुआवजे के बिना भूमि अधिग्रहण के लिए राज्य की शक्तियों का स्पष्ट रूप से उल्लंघन किया है, ये प्रावधान संवैधानिकता की कसौटी पर खरे नहीं उतर सकते। यह कोई मायने नहीं रखता कि अपराध खुला, प्रत्यक्ष या प्रकट, गुप्त और अप्रत्यक्ष हो। यह रंग-बिरंगे कानून का एक टुकड़ा है। अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन इतना स्पष्ट है कि इसमें संदेह की कोई गुंजाइश ही नहीं बचती। मेरा मानना है कि धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) भारत के संविधान के अनुच्छेद 31-ए का उल्लंघन करते हुए अमान्य हैं। इसलिए, हरियाणा राज्य को 1992 के अधिनियम की धारा 2(जी)(4) और 2(जी)(6) के प्रावधानों को लागू करने से रोकने के लिए परमादेश जारी किया जाता है।

(58) न्यायिक समीक्षा के अभाव में संविधान की मूल संरचना के उल्लंघन के रूप में अधिनियम की वैधता की जांच करने से पहले सही धारणा रखने के लिए, 1992 के अधिनियम की धारा 7 के विवादित प्रावधान और तर्कों के संदर्भ में 1961 के अधिनियम की धारा 13 के प्रावधानों को शब्दशः देखा जा सकता है जो निम्नानुसार हैं:

“धारा 7(1) :

गांव में अधिकार क्षेत्र रखने वाला प्रथम श्रेणी का सहायक कलेक्टर या तो स्वत: संज्ञान ले सकता है या पंचायत या गांव के निवासी या खंड विकास और पंचायत अधिकारी या सामाजिक शिक्षा और पंचायत अधिकारी, या खंड विकास और पंचायत अधिकारी द्वारा अधिकृत किसी अन्य अधिकारी द्वारा किए गए आवेदन पर कर सकता है। , और ऐसी संक्षिप्त जांच करने के बाद जो वह उचित समझे और ऐसी प्रक्रिया के अनुसार जो निर्धारित की जा सकती है, उस गांव के शामलात देह में भूमि या अन्य अचल संपत्ति पर गलत या अनधिकृत कब्जा करने वाले किसी भी व्यक्ति को बेदखल कर दें जो निहित है या जो इस अधिनियम के तहत पंचायत में निहित माना जाता है और पंचायत को उसके कब्जे में दे देगा और ऐसा करने के लिए प्रथम श्रेणी के सहायक कलेक्टर पंजाब किरायेदारी अधिनियम, 1887 के तहत भूमि के कब्जे के लिए डिक्री के निष्पादन के संबंध में राजस्व न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं।

बशर्ते कि यदि ऐसी किसी कार्यवाही में स्वामित्व का प्रश्न उठाया जाता है और दस्तावेजों के आधार पर प्रथम दृष्टया साबित कर दिया जाता है कि स्वामित्व का प्रश्न वास्तव में शामिल है, तो प्रथम श्रेणी के सहायक कलेक्टर उस आशय का निष्कर्ष दर्ज करेंगे और पहले इसके बाद निर्धारित तरीके से शीर्षक के प्रश्न पर निर्णय लेंगे। ।”

धारा 7(3) :

उप-धारा (1) के प्रावधान के तहत स्वामित्व के प्रश्न को तय करने की प्रक्रिया वही होगी जो सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 में निर्धारित की गई है। 1961 अधिनियम की धारा 13-ए, जैसा कि 1992 के संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले अस्तित्व में थी, बशर्ते कि कोई भी व्यक्ति भूमि और अचल संपत्ति में अपने अधिकार की घोषणा का दावा करता है या पंचायत में निहित माना जाता है ,1980 के अधिनियम के प्रारंभ होने की तिथि से 5 वर्ष के भीतर निर्धारण के लिए एक वाद दायर किया जा सकता है:-

(i) क्या ऐसी रखी या अचल संपत्ति शामलात देह है या नहीं?

(ii) क्या यह या कोई अधिकार, स्वामित्व या हित अधिनियम के तहत पंचायत में निहित है या नहीं?

(59) धारा 13-ए के तहत उपरोक्त संदर्भित प्रश्न को निर्धारित करने की प्रक्रिया सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 द्वारा प्रदान की गई थी। 1961 अधिनियम की धारा 13 जो सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को रोकती है, निम्नानुसार चलती है: -

“13. क्षेत्राधिकार की वर्जना-किसी भी सिविल न्यायालय को अधिकारिता नहीं होगी-

(ए) किसी भी प्रश्न पर विचार करना या निर्णय देना चाहे;

(i) कोई भूमि या अन्य अचल ठीक से शामलात देह है या नहीं है।

(ii) कोई भूमि या अन्य अचल संपत्ति या ऐसी भूमि या अन्य अचल संपत्ति में कोई अधिकार, शीर्षक या हित इस अधिनियम के तहत पंचायत में निहित है या निहित नहीं है।

(बी) किसी भी मामले के संबंध में जिसे निर्धारित करने के लिए कोई भी रेवेनस न्यायालय, अधिकारी या प्राधिकरण इस अधिनियम के तहत या उसके तहत सशक्त है; या

(सी) इस अधिनियम के तहत ऐसा करने के लिए सशक्त किसी राजस्व न्यायालय, अधिकारी या प्राधिकारी द्वारा की गई किसी भी कार्रवाई या निर्णय किए गए मामले की वैधता पर सवाल उठाना।

स्पष्ट रूप से यह बात सामने आती है कि:-

(i) केवल सहायक कलेक्टर ही शामलात देह भूमि या अन्य अचल संपत्ति पर गलत या अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्ति को सरसरी तौर पर बेदखल कर सकता है, जो ग्राम सामान्य भूमि अधिनियम, 1961 के तहत पंचायत में निहित या निहित मानी जाती है।

(ii) जांच के बाद ही निष्कासन का आदेश दिया जा सकता है;

(iii) सहायक कलेक्टर के समक्ष स्वामित्व का प्रश्न उठाए जाने पर, उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेजी साक्ष्यों के आधार पर वह प्रथम दृष्टया संतुष्ट हो जाता है कि वास्तव में स्वामित्व का प्रश्न शामिल था, इससे पहले इस आशय का निष्कर्ष दर्ज किया जाएगा, कि प्रथम दृष्टया शीर्षक का प्रश्न शामिल था और इसके बाद वह राजस्व न्यायालय के रूप में स्वामित्व के प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ेगा;

(iv) स्वामित्व के प्रश्न पर निर्णय लेने की प्रक्रिया के दौरान सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना सहायक कलेक्टर पर निर्भर था;

(v) सिविल न्यायालयों को यह निर्धारित करने से रोक दिया गया था -

(ए) संपत्ति की प्रकृति यानी वह शामलात देह थी या नहीं;

(बी) क्या यह 1961 के अधिनियम के तहत ग्राम पंचायत में निहित है या नहीं;

(सी) अन्य प्रश्न निर्धारित करें जिन पर अधिनियम के तहत प्राधिकारी को निर्णय लेना आवश्यक था;

(डी) किए गए कार्य या निर्णय किए गए मामले की वैधता निर्धारित करें।

(vi) सहायक कलेक्टर का गठन पंचायत में निहित भूमि की प्रकृति के साथ-साथ भूमि या अन्य अचल संपत्ति के संबंध में स्वामित्व के प्रश्न का निर्णय करने के लिए एक वैकल्पिक न्यायाधिकरण के रूप में किया गया था।

(vii) सहायक कलेक्टर को गलत या अनधिकृत कब्जे वाले लोगों को सारांश कार्यवाही द्वारा बेदखल करने की शक्ति प्रदान की गई थी। वह अपने आदेशों को लागू कर सकता था और डिक्री को निष्पादित करने के लिए राजस्व न्यायालय के रूप में अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकता था।

ग्राम मालिकों, भूमि धारकों और अन्य बाहुबलियों द्वारा सामान्य भूमि के मानवीय चतुराई, लालच और शोषण से निपटने के लिए और ग्राम जीवन में बदलते परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए, ग्राम समुदाय के कल्याण को ध्यान में रखते हुए और सामान्य भूमि को सूदखोर लालच से बचाने के लिए और सामान्य सामान्य कानून अदालतों में होने वाली लौकिक देरी से बचने के लिए, जिसके परिणामस्वरूप अनधिकृत या गलत कब्जेदारों से कब्जा लेने में काफी देरी होती है, पूछताछ के बाद सारांश बेदखली के लिए तंत्र प्रदान किया गया। यह सामान्य उद्देश्य के लिए उपयोग हेतु भूमि पर पंचायतों का कब्ज़ा करने के लिए किया गया था। यह समय की मांग थी और ग्रामीण जीवन में सामाजिक व्यवस्था की रक्षा और सामाजिक जरूरतों

को पूरा करने के लिए किया गया था। इसका उद्देश्य ग्राम समुदाय को शांति प्रदान करना और समग्र रूप से समुदाय के लाभ के लिए सामान्य भूमि पर कब्ज़ा करने के लिए पंचायतों को एक प्रभावी और त्वरित उपाय प्रदान करना था।

(60) ऐसा प्रतीत होता है कि कानून ने तथ्यों को निर्धारित करने की शक्तियाँ प्रदान की हैं कि भूमि ग्राम पंचायत में निहित है या नहीं और इसके शीर्षक से संबंधित प्रश्न सहायक कलेक्टरों को ग्राम जीवन की जमीनी हकीकतों के साथ उनकी बातचीत को ध्यान में रखते हुए दिए गए हैं। हालाँकि यह उनकी एकमात्र जागीर नहीं हो सकती है फिर भी इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि वे इस संबंध में बेहतर सुसज्जित हैं।

(61) यह सार्वजनिक हित में है कि भूमि को बिना किसी कानूनी जोखिम के जल्द से जल्द सार्वजनिक उपयोग में लाया जाना चाहिए, जैसा कि फैसले के पहले भाग में संदर्भित व्यापक विचार के आधार पर किया जाना चाहिए। गाँव के निवासियों के सार्वजनिक हितों के लिए प्रदत्त शक्तियों को व्यक्तियों के हितों के परिवर्तन पर हल्के ढंग से खारिज नहीं किया जाना चाहिए। यह स्पष्ट है कि शक्तियां कार्य की उपयुक्तता और उसके लिए आवश्यक गुणों को ध्यान में रखते हुए प्रदान की जाती हैं।

(62) आमतौर पर, कानून का शासन किसी भी सभ्य समाज की बुनियादी आवश्यकता है और कानून के शासन को बनाए रखने के लिए सभी मान्यता प्राप्त तंत्र प्राधिकार का प्रयोग करने के लिए जांच और संतुलन प्रदान करते हैं। कानूनी अधिकार को लागू करने के लिए किसी सामान्य सिविल न्यायालय के उपाय पर रोक लगाने या सामान्य सिविल न्यायालयों द्वारा न्यायिक समीक्षा के कानून को कमजोर करने से पहले आम तौर पर उन पक्षों के अधिकारों के निर्धारण के लिए एक वैकल्पिक उपाय प्रदान किया जाता है, जिनके प्रभावित होने की संभावना होती है। उपाय वैधानिक प्रतिबंध के साथ हो सकता है जो स्थिति और इसकी तात्कालिकताओं से निपटने के लिए आवश्यक हो सकता है। यह सिविल न्यायालयों के लिए मानदंड हो सकता है या यह प्रशासनिक न्यायाधिकरण का रूप ले सकता है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि न्यायिक समीक्षा के लिए ट्रिब्यूनल के प्रक्रियात्मक और मूल प्रावधान संवैधानिक प्रावधानों के साथ असंगत होने चाहिए।

(63) किसी अधिकार को लागू करने के लिए या किसी विशेष प्रारूप में किसी के कानूनी अधिकार का दावा करने के लिए सीमा या समय अवधि प्रदान करना एक विधान की अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त विशेषताएं हैं। 1980 के अधिनियम द्वारा विधानमंडल ने अपने विवेक से किसी के अधिकार की घोषणा के लिए मुकदमा लाने के लिए पांच साल की अवधि प्रदान की और ऐसी घोषणाओं को मंजूरी देने वाले सामान्य नागरिक न्यायालय के क्षेत्राधिकार के प्रयोग पर भी रोक लगा दी।

(64) इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायिक समीक्षा भारतीय संविधान के बुनियादी स्तंभों या विशेषताओं में से एक है। राज्य अपने लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए प्रयास करते हैं लेकिन यह नागरिकों के अधिकारों को सुरक्षित और संरक्षित करके किया जाना चाहिए और राज्य के कार्यों की न्यायिक समीक्षा के लिए तंत्र के बिना यह कागजी सपना होगा। लोगों के बीच सुरक्षा की भावना पैदा करने के लिए न्यायिक प्रक्रिया एक बुनियादी आवश्यकता है, मानवीय सरलता के बावजूद लोगों के अधिकारों को न्यायालयों के माध्यम से संरक्षित किया जा सकता है, और किया जा सकता है, जिनके हस्तक्षेप के बिना प्रशासनिक अधिकारियों के पास व्यक्तियों की संपत्ति हड़पने की बेलगाम शक्तियां निहित होंगी। साथ ही, न्यायिक समीक्षा के लिए संस्थागत तंत्र या व्यवस्था प्रदान करना हमारे संविधान के तहत स्वीकार्य है। न्यायिक प्रक्रिया द्वारा अधिकारों के निर्णय के लिए फोरम अलग-अलग हो सकते हैं। सामान्य नगरपालिका न्यायालयों की सिविल न्यायालयों द्वारा न्यायिक, समीक्षा के बहिष्कार को अपने आप में न्यायिक समीक्षा के ब्लैक आउट के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है, जिसके बिना संविधान द्वारा प्रदान किए गए अधिकार केवल मानवीय मतिभ्रम होंगे। न्यायिक समीक्षा के लिए वैकल्पिक मंच प्रदान करना निश्चित रूप से संविधान के अनुच्छेद 14 आदि जैसे प्रावधानों के अधीन होगा। स्थिति की आवश्यकता से परे प्रदान की गई कठोर या मनमानी प्रक्रिया न्यायिक जांच के अधीन है। न्यायिक प्रक्रिया द्वारा न्यायिक तथ्य जुटाए जा सकते हैं। यह आम आदमी की न्याय की भावना ही है जो लोकतंत्र को कायम रखती है। यह तय करते समय फोरम में बदलाव कोई मायने नहीं रखता कि क्या कद न्यायिक समीक्षा को खत्म कर देता है। निर्णय के लिए मंच बदलने से हमारे संविधान द्वारा परिकल्पित न्यायिक समीक्षा का संवैधानिक अधिकार समाप्त नहीं हो जाएगा। किसी भी व्यक्ति द्वारा मुकदमा दायर करना, जब तक कि किसी विशिष्ट क़ानून द्वारा वर्जित न हो, किसी व्यक्ति में स्वयं अंतर्निहित है। मुकदमे के रख-रखाव के लिए कानून के किसी विशिष्ट प्राधिकार की आवश्यकता नहीं है। यह पर्याप्त है कि कोई क़ानून इस पर रोक नहीं लगाता।

हालाँकि, अपील का मामला मुकदमे से भिन्न स्तर पर है। अपील केवल तभी दायर की जा सकती है यदि कानून इसे अधिकृत करता है।

(65) अधिकारों के निर्णय के लिए सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर रोक लगाने वाले कथित अधिनियम की शक्तियों का परीक्षण करने के लिए, सबसे पहले यह देखना होगा कि क्या पीड़ित पक्ष के पास प्रतिनिधित्व का अधिकार है और दूसरा, क्या लगाया गया प्रतिबंध मनमाना है। राज्य की कार्रवाई का मूल्यांकन उसके संचालन के आधार पर किया जाना चाहिए। यह अपरिहार्य है कि राज्य की कार्रवाई की वैधता उसके सभी आयामों में उसके विषयों या विषयों के समूहों के अधिकारों पर उसके संचालन के प्रकाश में तय की जाती है। प्रक्रियात्मक प्रावधानों की तर्कसंगतता की जांच को न्यायिक समीक्षा से बाहर नहीं रखा गया है। कार्यकारी आदेश की तर्कसंगतता, प्रदान किए गए उपायों की पर्याप्तता और पर्याप्तता यह निष्कर्ष निकालने के लिए प्रासंगिक विचार हैं कि न्यायिक समीक्षा समाप्त हो गई है या नहीं। प्रावधान कठोर होने से प्रावधान 'अधिकार से परे' नहीं हो जायेंगे। कोक ने यह प्रतिपादित किया कि शक्तियों का परीक्षण करने और कानून के दायरे की सही ढंग से सराहना करने के लिए। एक बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए-

(i) अधिनियम पारित होने से पहले कानून क्या था?

(ii) वह कौन सी शरारत या दोष था जिसका कानून ने प्रावधान नहीं किया था?

(iii) संसद ने किस उपाय को मंजूरी दी है?

(iv) उपाय के कारण। के.के. कोचुनी बनाम राज्य, मद्रास और केरल (20) का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि न तो किसी अधिनियम का प्रभाव मायने रखता है और न ही उसका स्वरूप मायने रखता है, बल्कि यह उसके संचालन का सार है जो मायने रखता है।

(66) संविधान के अनुच्छेद 32 और 226 द्वारा न्यायिक समीक्षा प्रदान की गई है, जो भारत के उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक समीक्षा की शक्तियां प्रदान करती है, न कि किसी अन्य निकाय या प्राधिकरण पर, चाहे वह संविधान के तहत कार्यकारी या विधायी पदाधिकारी हो। इसे न्यायपालिका को किसी सलाह या निर्देश से नियंत्रित नहीं किया जा सकता. इसके अलावा 'न्यायिक' शब्द ने भी एक निश्चित अर्थ प्राप्त कर लिया है। यह निर्णय इसकी कार्यात्मक समानता के कारण है जैसा कि कानून के न्यायालयों द्वारा किया गया था, और सिविल न्यायालयों को प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार किया गया था। न्यायाधिकरण के आदेश को न्यायिक आदेश के रूप में प्रस्तुत करने के लिए ये आवश्यक तत्व हैं।

(67) धारा 7 पंचायत को उसकी संपत्ति यानी अधिनियम के तहत उसमें निहित संपत्ति पर कब्ज़ा करने के लिए प्रदान की गई सारांश प्रक्रिया का खुलासा करती है। प्राधिकरण को लाभार्थियों ग्राम पंचायतों के स्वामित्व और हित का निर्धारण करने के लिए जांच शक्तियां प्रदान की गई हैं। सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार किसी भी व्यक्ति के स्वामित्व के प्रश्न का निर्धारण करते समय सहायक कलेक्टर को राजस्व न्यायालय के रूप में कार्य करना आवश्यक है।

(20) 1960 एस.सी. 1080।

सहायक कलेक्टर के अधिकार क्षेत्र को इस हद तक सीमित कर दिया गया है कि वह पंचायत को केवल 19 (1) अधिनियम के तहत उसमें निहित भूमि या अन्य संपत्ति के कब्जे में रख सकता है। दस्तावेजी सबूतों के आधार पर यह निष्कर्ष निकालने के बाद कि शीर्षक विवादित है, विवादित शीर्षक के प्रश्न को प्रथम दृष्टया निर्धारित करने के लिए सहायक कलेक्टर के अधिकार पर लगाया गया प्रतिबंध, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं माना जा सकता है। विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि सहायक कलेक्टर को स्वामित्व के प्रश्न पर निर्णय लेते समय सिविल प्रक्रिया संहिता की प्रक्रिया का पालन करना होता है।

(68) ऊपर की गई टिप्पणियों के मद्देनजर, मेरा मानना है कि न्यायिक कार्यों के निर्वहन के लिए सहायक कलेक्टर को ट्रिब्यूनल कहा जा सकता है। इसे इस तथ्य से भी समर्थन मिलता है कि सहायक कलेक्टर का निर्णय न केवल पार्टियों के बीच बाध्यकारी है, बल्कि निर्णायक भी है, किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा इसकी पुष्टि या अपनाने की आवश्यकता के बिना। सहायक कलेक्टर का आदेश राजस्व न्यायालय की डिक्री के रूप में अपीलीय और निष्पादन योग्य है। मैं यह कहने का साहस कर सकता हूं कि अनधिकृत व्यक्तियों को बेदखल करने और पंचायत को कब्जे में लेने के लिए प्रदान की गई प्रक्रिया न्यायिक प्रकृति की है। अधिनियम के तहत न्यायिक रूप से कार्य करना अधिकारियों पर निर्भर है।

(69) प्राधिकरण/न्यायाधिकरण स्थापित करना, न्यायिक रूप से कार्य करना और पार्टियों के अधिकारों का निर्धारण करना विधानमंडल का क्षेत्र है। जब तक विधानमंडल भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त अपनी शक्तियों का प्रयोग करता है और पार्टियों के अधिकारों को निर्धारित करने के लिए न्यायाधिकरणों का प्रावधान करता है; प्रावधानों को केवल इस आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता है कि ये कठोर हैं और कुछ घोषणात्मक अधिकारों को रोकते हैं या सामान्य कानून के तहत उपलब्ध उपायों को प्रतिबंधित करते हैं। विधायी शक्ति का प्रयोग समाज के शासन के लिए कानून बनाने या अधिनियमित कानूनों को प्रशासित करने के लिए शक्तियों का प्रयोग प्रदान करने के लिए किया जाना है। न्यायिक शक्ति तब शुरू होती है जब ट्रिब्यूनल या प्राधिकरण प्रदान किया जाता है, जिसे बाध्यकारी निर्णय देने की शक्तियां प्राप्त होती हैं, भले ही तथ्य कुछ भी हो, निर्णय अपील योग्य है या नहीं। विधायिका को अधिनियम के तहत राहत के लिए कानूनी शर्तें निर्धारित करने का अधिकार है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायालय विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध और उपाय दे सकते हैं, उदाहरण के लिए निषेधात्मक, अनिवार्य, निरर्थक, दंडात्मक, घोषणात्मक, प्रतिबंधात्मक या क्षतिपूर्ति आदि। विधानमंडल किसी भी उपाय को प्रतिबंधित या समाप्त कर सकता है, बशर्ते कि उन्मूलन उचित हो और अधिनियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के अनुरूप हो।

(70) ऊपर की गई टिप्पणियों के मद्देनजर, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि सहायक कलेक्टर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत रिट के नियंत्रण के अधीन न्यायिक कार्यों का निर्वहन करता है। मैं यह जोड़ने में जल्दबाजी कर सकता हूं कि सहायक कलेक्टर को प्रदत्त शक्तियां न तो कानून के सामान्य सिद्धांतों के विपरीत हैं और न ही इतनी मनमानी या अनुचित हैं कि कोई भी निष्पक्ष दिमाग वाला व्यक्ति इन्हें महत्व नहीं दे सकता। कठिनाई की घटनाओं को लोगों के प्रतिनिधियों द्वारा बनाए गए कानून के प्रावधानों को अमान्य करने का आधार नहीं माना जा सकता है, जो अपने लोगों की जरूरतों के बारे में बेहतर जानकारी रखते हैं।

(71) मुझे याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए विवाद में कोई ताकत नहीं दिखती है कि चूंकि लगाए गए प्रावधान प्रथम दृष्टया शीर्षक स्थापित करने के लिए सबूत का केवल एक तरीका प्रदान करते हैं, अर्थात् दस्तावेजी साक्ष्य और मौखिक साक्ष्य को खारिज करते हैं, ये किसी व्यक्ति के अपने अधिकार के बारे में स्वतंत्र रूप से घोषणा की मांग करने के अधिकार का उल्लंघन करते हैं। मेरा मानना है कि सहायक कलेक्टर को संतुष्ट करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य की आवश्यकता है कि स्वामित्व का प्रश्न वास्तव में शामिल है, अधिनियम के उद्देश्य और अनुभव से निकाले गए निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए आवश्यक आवश्यकता है कि तुच्छ आपत्तियां उठाकर गलत और अनधिकृत स्वामित्व गाँव की सामान्य भूमि पर अनियमित अवधि तक कब्ज़ा बनाए रखने में सक्षम थे। किसी तथ्य को साबित करने के लिए एक तरीका प्रदान करना, अपने आप में, प्रावधानों को मनमाना या किसी मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं करता है, हालांकि मेरे विचार में चुनौती के तहत प्रावधानों द्वारा मौखिक साक्ष्य को खारिज नहीं किया गया है। जैसा कि यह अंतर्निहित है क्योंकि प्राधिकरण के इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि शीर्षक का प्रश्न प्रथम दृष्टया शामिल है, शीर्षक का प्रश्न सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुसार तय किया जाना है। प्रथम दृष्टया प्रमाण और सबूत की अवधारणा दो अलग-अलग अवधारणाएँ हैं। जैसा कि याचिकाकर्ताओं के वकील ने तर्क दिया है, मैं यह समझने में असफल हूं कि दोनों अवधारणाएं एक-दूसरे के विरोधाभासी कैसे हैं।

(72) ऊपर की गई टिप्पणियों के मद्देनजर, मुझे याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्क में कोई बल नहीं मिला कि संशोधन अधिनियम, 1992 के अधिनियमन से न्यायिक समीक्षा समाप्त हो गई है या घोषणात्मक राहत प्राप्त करने का अधिकार किसी भी तरह से प्रभावित हुआ है।

(73) यह तर्क कि अधिनियम द्वारा सामान्य सिविल न्यायालयों को कोई वैकल्पिक उपाय प्रदान नहीं किया गया है, उपरोक्त टिप्पणियों के मद्देनजर कायम नहीं रखा जा सकता है कि सहायक कलेक्टर को ऐसी शक्तियां प्रदान की गई हैं जो सामान्य न्यायालयों की शक्तियों के साथ लगभग समान हैं। याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा उद्धृत निर्णयों में निर्धारित कानून के सिद्धांत के साथ कोई विवाद नहीं है, जिनकी गणना नीचे दी गई है;

(74) सतीश चंद्र आनंद बनाम भारत संघ (21), धुलाभाई बनाम मध्य प्रदेश राज्य (22), अतिरिक्त आयकर आयुक्त, गुजरात बनाम सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन सूरत (23), तारा चंद बनाम ग्राम पंचायत (24), ग्राम पंचायत, मेहल कलां बनाम राम सिंह (25), राम सिंह बनाम ग्राम, पंचायत (26), मिनर्वा 'मिल्स लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (27), माधव राव सिंधिया बनाम भारत संघ (28), कमला मिल्स बनाम बॉम्बे स्टेट (29), और गंगा बाई बनाम विजय कुमार और अन्य (30)। निर्णय के पहले भाग में दिए गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए कि अधिनियम द्वारा वैकल्पिक उपाय प्रदान किया गया है, न्यायिक समीक्षा पर कोई रोक नहीं है। इस संबंध में विवादित अधिनियम और संविधान के प्रावधानों के बीच कोई असंगतता नहीं है।

(75) मैं सुविचारित दृष्टिकोण का हूं; सामान्य सामान्य कानून न्यायालयों द्वारा न्यायिक समीक्षा के किसी भी प्रकट या गुप्त बहिष्कार के कारण अधिनियम के तहत अधिकारियों के पास कोई बेलगाम शक्ति निहित नहीं है। न्यायिक समीक्षा की अनुमति देने वाले भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के साथ पठित अनुच्छेद 226 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने के लिए उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र, जो कि संविधान की आत्मा है, को बाहर नहीं रखा गया है। लाभार्थियों के लिए शीघ्र उपचार प्रदान करने वाले सारांश निष्कासन के प्रावधानों को स्थिति की आवश्यकता से परे बहुत कठोर या मनमाना नहीं कहा जा सकता है। प्रभावित होने की संभावना वाले पक्ष को सुनवाई का अवसर प्रदान करना, जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अभिन्न अंग है और जिसे कानूनी अधिकार में शामिल किया गया है, धारा 7 के तहत प्रदान किया गया है। केवल निर्णय लेने के लिए फोरम को सिविल कोर्ट से बदलकर राजस्व प्राधिकरण कर दिया गया है। अधिनियम द्वारा प्रदत्त मापदंडों एवं प्रतिबंधों के अंतर्गत राजस्व प्राधिकारी से न्यायिक निर्णय प्राप्त करने के अधिकार के साथ छेड़छाड़ नहीं की गई है।

(76) वकील के इस तर्क की सराहना करने के लिए कि अपील का अधिकार भ्रामक है, 1992 के अधिनियम द्वारा प्रदान की गई अपील के संबंध में लागू प्रावधानों पर ध्यान देना समीचीन होगा जो निम्नानुसार चलता है: " (1) प्रथम श्रेणी के सहायक कलेक्टर के आदेश से व्यथित कोई भी व्यक्ति, धारा 7 की उप-धारा (1) या उप-धारा (2) के तहत पारित आदेश की तारीख से तीस दिनों की अवधि के भीतर कलेक्टर के समक्ष निर्धारित प्रारूप और तरीके से अपील कर सकता है।

(21) ए.आई.आर. 1953 एस.सी. 250।

(22) ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 78.

(23) ए.आई.आर. 1980 एस.सी. 387.

(24) 1979 पी.एल.जे. 1.

(25) 1986 पी.एल.जे. 307.

(26) 1986 पी.एल.जे. 636.

(27) ए.आई.आर. 1980 एस.सी. 1789.

(28) ए.आई.आर. 1971 एस.सी. 530।

(29) ए.आई.आर. 1965 एस.सी. 1942.

(30) ए.आई.आर. 1974 एस.सी. 1126.

और कलेक्टर, अपील सुनने के बाद, जैसा उचित समझे, आदेश की पुष्टि कर सकता है, उसमें बदलाव कर सकता है या उसे उलट सकता है: बशर्ते कि ऐसी कोई अपील तब तक नहीं की जाएगी जब तक कि धारा 7 की उपधारा (2) के तहत लगाए गए जुर्माने की राशि, यदि कोई हो, कलेक्टर के पास जमा नहीं की जाती है।

(77) क़ानून धारा 7(1) के तहत निष्कासन के आदेश के खिलाफ अपील करने या धारा 7(2) के तहत दंडात्मक हर्जाना लगाने का अधिकार कलेक्टर को प्रदान करता है। स्पष्ट शर्तों में अपील का अधिकार प्रदान करने के बाद इस आशय का एक प्रावधान प्रदान करके एक प्रतिबंध जोड़ा गया है कि कोई भी अपील तब तक नहीं की जाएगी जब तक कि लगाया गया जुर्माना जमा न कर दिया जाए।

(78) श्याम किशोर बनाम दिल्ली नगर निगम (31) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक कर मामले में अपील के लिए शर्त की वैधता पर विचार करते हुए प्रावधान किया कि कोई अपील नहीं सुनी जाएगी या निर्धारित नहीं की जाएगी, जब तक कि विवाद में कोई राशि अपीलकर्ता द्वारा जमा नहीं की गई है, यह देखा गया कि ऐसा कोई कारण नहीं है कि विधायिका इस तरह के अधिकार के प्रयोग के लिए कोई शर्त नहीं लगा सकती है जब तक कि शर्त अपील के अधिकार को लगभग भ्रामक बनाने के लिए इतनी कठिन न हो। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनंत मिल्स बनाम गुजरात राज्य (32) पर ध्यान देते हुए कहा कि परंतुक, अपीलीय प्राधिकारी को उस जमा राशि से छूट देने के लिए अधिकृत करता है जहां इससे कठिनाई होने वाली है या ऐसी शर्त लगाने से उसे प्रावधान की कठोरता से छुटकारा पाने में सक्षम बनाया जा सकता है और अपील के अधिकार को रद्द नहीं करता है, खासकर जब विवेक न्यायाधीश/प्राधिकरण में निहित हो। यह देखा गया कि अपील के अधिकार की आवश्यकता और कर की शीघ्र वसूली की वांछनीयता संतुलित थी। अपील के अधिकार के प्रयोग के लिए लगाई गई शर्त की तर्कसंगतता पर विचार किया जा सकता है।

(79) जुर्माना जमा करने की शर्त लगाने का उद्देश्य फालतू मुकदमेबाजी को रोकना है। मोटे तौर पर, तर्कसंगतता के लिए परीक्षण मद्रास राज्य बनाम वी.जी. रो (33) में माननीय शीर्ष न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया था, जिसमें यह देखा गया था कि तर्कसंगतता का परीक्षण करने के लिए कोई अमूर्त मानक या संपूर्ण पैटर्न निर्धारित नहीं किया जा सकता है। व्यक्तिगत मामलों पर दिमाग लगाकर तर्कसंगतता को देखा जाना चाहिए, जिस अधिकार का उल्लंघन किया गया है उसकी प्रकृति, विरोध किए गए प्रतिबंध का अंतर्निहित उद्देश्य, ईवीआई की सीमा और तात्कालिकता को ठीक करने की मांग, लगाए जाने की असंगतता, लगाए जाने के समय मौजूदा स्थितियां, मूल्यांकन सामाजिक दर्शन और मूल्य का पैमाना आदि। महाराष्ट्र राज्य बनाम हिम्मत भाई नरभेराम राव और अन्य (34) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि तर्कसंगतता

(31) ए.टी.आर. 1992 एस.सी. 2279|

(32) ए.आई.आर. 1975 एस.सी. 1234|

(33) ए.आई.आर. 1957 एस.सी. 196|

(34) ए.टी.आर. 1970 एस.सी. 1157|

निर्धारित करने के लिए प्रतिबंध अधिकार के प्रयोग के खिलाफ सार्वजनिक हित की सुरक्षा की आवश्यकता के अनुरूप होना चाहिए। सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर ही तर्कसंगतता का निर्णय किया जा सकता है।

(80) जैसा कि निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में देखा गया है, 1992 अधिनियम की धारा 7(2) में गलत और अनधिकृत कब्जे के लिए प्रति वर्ष 5,000 रुपये से 10,000 प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर के बीच निवारक दंडात्मक क्षति का प्रावधान किया गया है। प्रथम दृष्टया क्षति की दर दंडात्मक प्रतीत होती है, यहां तक कि क़ानून भी इसे तब स्वीकार करता है जब इसे 'जुर्माना' कहा जाता है। जमा भूमि स्वामित्व से संबंधित नहीं है जिसे किसी भी प्रतिमा द्वारा तुच्छ कहा जा सकता है।

(81) परंतुक द्वारा लगाया गया प्रतिबंध अपील के अधिकार को मात्र कागजी अधिकार प्रदान करने के मूल खंड को प्रस्तुत करता है। वास्तव में अपील का अधिकार निरर्थक हो गया है। लगाया गया प्रतिबंध सख्त है. सैद्धांतिक रूप से, अपील का अधिकार प्रदान किया गया है, लेकिन जमीनी हकीकत यानी भारतीय ग्रामीणों की गरीबी को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। अपील करने के अधिकार में ग्राम पंचायत द्वारा निहित घोषित की गई भूमि या अचल संपत्ति के कब्जे के संबंध में अधिकार की रक्षा करने का अधिकार शामिल होना चाहिए।कार्यकारी फ्लैट के खिलाफ अपील का कम से कम एक अधिकार उचित प्रक्रियात्मक अधिकार है, खासकर जब सामान्य सिविल न्यायालय द्वारा जांच को छीन लिया गया हो। सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मेरा मानना है कि अपील पर विचार करने से पहले हर्जाना जमा करने के प्रावधान द्वारा प्रदान की गई शर्त लगाना अनुचित है। यह प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के मनमाना और अनुचित होने से प्रभावित है। इसके अलावा अधिकारियों को भू-राजस्व के बकाया के रूप में लगाए गए नुकसान की वसूली करने का अधिकार है। उपरोक्त सभी तथ्यों और टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए, मेरा मानना है कि 1992 के अधिनियम की धारा 5 में अपील पर विचार करने के लिए दंडात्मक हर्जाना जमा करने का प्रावधान संविधान के अधिकार क्षेत्र से बाहर है और इसे ऐसा घोषित किया जाता है।

(82) धारा 7 (2) और धारा 7(5) का उल्लेख करना उचित होगा जिसे कथित तौर पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 का उल्लंघन कहा जाता है। धारा 7(2) "प्रथम श्रेणी के सहायक कलेक्टर को लिखित आदेश द्वारा, किसी भी व्यक्ति को उसके गलत या अनधिकृत कब्जे पर पांच हजार रुपये से कम की दर से जुर्माना देने की आवश्यकता होगी और भूमि या अन्य अचल संपत्ति से प्राप्त होने वाले लाभ को ध्यान में रखते हुए प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर दस हजार रुपये से अधिक नहीं। यदि आदेश की तारीख से तीस दिनों की अवधि के भीतर जुर्माना का भुगतान नहीं किया जाता है, तो यह भूमि राजस्व के बकाया के रूप में वसूली योग्य होगा।

धारा 7(5)

"कोई भी व्यक्ति जो शमिलत देह में भूमि या अन्य अचल संपत्ति पर गलत या अनधिकृत कब्जे में पाया जाता है और उसे उप-धारा (1) के तहत बेदखल करने का आदेश दिया जाता है, उसे दो साल तक की कैद की सजा हो सकती है।" धारा 7ए "अपराध का संज्ञान: आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का क्रमांक 2) में निहित किसी भी बात के बावजूद, प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट के अलावा कोई भी न्यायालय इस अधिनियम के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा या मुकदमा नहीं चलाएगा"।

(83) धारा 7बी आगे अभियोजन की प्रक्रिया प्रदान करती है और दंडात्मक कार्यवाही शुरू करने पर प्रतिबंध लगाती है, जिसे गलत या अनधिकृत कब्जे वाले के खिलाफ निष्कासन आदेश की पुष्टि होने के बाद ही शुरू किया जा सकता है।

(84) संक्षेप में, यह धारा 7(2) और 7(5) को पढ़ने से पता चलता है जो धारा 7-ए और 8बी के साथ पढ़ी जाती है जो विधायिका ने प्रदान की है। गाँव की सामान्य भूमि के अनधिकृत या अवैध कब्जेदार के लिए नागरिक और साथ ही आपराधिक दायित्व। यह सर्वविदित अवधारणा है कि क्षति या तो दंडात्मक या प्रतिपूरक हो सकती है।धारा 7(2) की उस संदर्भ में दंडात्मक क्षति प्रदान करने की व्याख्या करते समय, जिसमें यह धारा में घटित होती है, यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि गांव की सामान्य भूमि पर गलत या अनधिकृत कब्जे के लिए मुआवजे के माध्यम से दंडात्मक क्षति प्रदान

की गई है। दंडात्मक क्षति का आकलन करने के लिए केवल निचली सीमा और ऊपरी सीमा तय करने या 'जुर्माना' शब्द के उपयोग से धारा का चरित्र नहीं बदल जाएगा,जो मेरे विचार में और कुछ नहीं बल्कि गाँव की आम भूमि के अनाधिकृत रूप से उपयोग और कब्जे के लिए दंडात्मक हर्जाना प्रदान करने का प्रावधान है। प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर आय को ध्यान में रखते हुए क्षति का आकलन करना प्राधिकरण का दायित्व है। नुकसान का निर्धारण करने से पहले सुनवाई का अवसर धारा में ही निहित है। उप-धारा (2) की वैधता को बनाए रखने के लिए इसे पढ़ना आवश्यक है। श्री श्री कालीमाता ठकुरानी बनाम भारत संघ और अन्य (35) का संदर्भ लिया जा सकता है। उप-धारा (2) द्वारा प्रदान किया गया दंडात्मक हर्जाना संभावित है यानी 1992 के अधिनियम के लागू होने के बाद की अवधि के लिए लगाया जा सकता है।इस्तेमाल किया गया 'दंड' शब्द धारा की भाषा से अपना रंग लेता है यानी नुकसान भूमि या अचल संपत्ति से प्राप्त होने वाले लाभ को ध्यान में रखते हुए लगाया जाना है। विधायिका की मंशा स्पष्ट है|

(85) धारा 7(2) ऐसे अपराध के लिए दंड का प्रावधान नहीं करती है जो निश्चित है और उस समय लागू कानून द्वारा दंडनीय बनाया गया कार्य या चूक है। मकबूल हुसैन बनाम बॉम्बे राज्य का संदर्भ लिया जा सकता है (36)धारा का इरादा स्पष्ट है, अर्थात् अनाधिकृत रूप से उपयोग की गई भूमि के लिए भुगतान प्राप्त करना।निर्धारित दर अधिक हो सकती है; लेकिन जैसा कि पहले देखा गया है, सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि किसी व्यक्ति पर केवल कठोर परिणाम देना ही संविधान का उल्लंघन नहीं है। आर. सी. कूपर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (37) का संदर्भ लिया जा सकता है। प्रावधानों के दायरे को बनाए रखने के लिए, मैं प्रावधानों को इस

(35) (1981) 2 एस.सी.सी. 283|

(36) ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 325|

(37) ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 564|

आशय से दोबारा लिखने का साहस कर सकता हूं कि संभावित रूप से निर्धारित दर पर हर्जाना लगाया जा सके। मेसर्स रघुबर दयाल जय पार्षद बनाम भारत संघ (38) का संदर्भ लिया जा सकता है।

(86) उपधारा (5) में शामलातदेह में भूमि या अन्य अचल संपत्ति पर अनधिकृत कब्ज़ा करने पर कारावास का प्रावधान है। उपधारा (5) किसी भी तरह से उपधारा (2) से असंगत नहीं है। दोनों धाराएं किसी अपराध के लिए कारावास का प्रावधान नहीं करती हैं।उप-धारा (5) स्पष्ट रूप से स्पष्ट रूप से गलत या अनधिकृत कब्जे को कारावास के साथ दंडनीय अपराध के रूप में प्रदान करती है।अपराध की सुनवाई सामान्य तरीके से मजिस्ट्रेट द्वारा की जा सकती है, उपयोग और कब्जे के लिए क्षतिपूर्ति प्रदान करने को अपराध बनाने वाले प्रावधान के रूप में नहीं बढ़ाया जा सकता है जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 और देश के न्यायिक न्यायालयों में समझा जाता है। एक ही अपराध के लिए दो बार सजा का कोई प्रावधान नहीं है। उपधारा (2) अनधिकृत कब्जे के लिए नागरिक दायित्व का प्रावधान करती है जबकि उपधारा (5) अनधिकृत कब्जे के लिए सजा का प्रावधान करती है। उप-धारा (2) में केवल 'दंड' शब्द का उपयोग अभियोजन और सजा प्रदान करने के लिए अधिनियम के प्रावधानों की प्रकृति को नहीं बदलेगा। अनुच्छेद 20 केवल 'समान अपराध' के लिए अभियोजन और सज़ा पर रोक लगाता है। यह किए गए अपराध के लिए नुकसान की वसूली पर रोक नहीं लगाता है। मैं उप-धारा (5) को पढ़कर यह समझने में असफल रहा कि यह कैसे पूर्वव्यापी प्रकृति का है। जो व्यक्ति गलत या अनाधिकृत कब्ज़ा जारी रखता है वह लगातार गलत काम कर रहा है। हर दिन गलत या अनाधिकृत कब्ज़ा करना कारावास से दंडनीय अपराध होगा। इस प्रकार मेरा मानना है कि उप-धारा (5) प्रकृति में संभावित है।

(87) ऊपर दर्ज कारणों से, मेरा मानना है कि:

(i) पंजाब ग्राम सामान्य भूमि (विनियमन) हरियाणा संशोधन अधिनियम, 1992 की धारा 2, 1992 का हरियाणा अधिनियम संख्या 9, -पंजाब विलेज कॉमन लैंड्स (रेगुलेशन) एक्ट, 1961 (इसके बाद प्रिंसिपल एक्ट कहा जाएगा) की धारा 2 (जी) में निहित परिभाषा में जो कुछ भी जोड़ा गया है, वह भारत के संविधान के अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

(ii) 1992 के हरियाणा अधिनियम संख्या 9 की धारा 3, जिसके तहत मूल अधिनियम की धारा 7 को प्रतिस्थापित किया गया है और प्रतिस्थापित प्रावधान अर्थात धारा 7 की उपधारा (1) भारत के संविधान के अंतर्गत हैं।

(iii) 1992 के हरियाणा अधिनियम संख्या 9 की धारा 3, - जिसके तहत मूल अधिनियम की धारा 7 को प्रतिस्थापित किया गया है और प्रतिस्थापित प्रावधान अर्थात धारा 7 की उपधारा (2) भारत के संविधान के अंतर्गत हैं और

(iv) हरियाणा अधिनियम 9 1992 की धारा 5 जिसमें संशोधन किया गया है मूल अधिनियम की धारा 13बी और प्रतिस्थापित उपधारा (1) का प्रावधान भारत के संविधान के अधिकारातीत है।

(88) जैसा कि ऊपर दर्शाया गया है, तदनुसार रिट याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

(38) ए.आई.आर. 1962 एस.सी. 263.